चन्दामामा
अगस्त १९८१

जीवन और हनु की भेंट–

प्रतिभा से!

प्रतिभा नैसर्गिक व असाधारण कल्पनात्मक, मौलिक या आविष्कारशील क्षमता को कहते हैं। कुछ बच्चों में शुरू से ही प्रतिभा के लक्षण दिखाई देने लगते हैं। इन्हें ही विलक्षण प्रतिभा सम्पन्न बालक कहा जाता है।

अल्बर्ट आइन्स्टाइन (1879-1955) अत्यन्त प्रसिद्ध वैज्ञानिक थे। उन्होंने भौतिक विज्ञान का अध्ययन किया था और 25 वर्ष की आयु में ही सापेक्षता के सिद्धान्त का प्रतिपादन किया। उन्होंने गुरुत्व, विद्युत चुंबकत्व और परमाणु ऊर्जा को समझाने के लिए अनेकों सिद्धान्तों का आविष्कार किया।

बहुमुखी प्रतिभासम्पन्न विरला ही कोई होता है। इटली का ल्योनार्डो दा विन्ची (1452-1519) एक ऐसा ही व्यक्ति था। वह महान कलाकार के साथ-साथ मूर्तिकार, इंजीनियर, वास्तुकार भी था। उसने मानव शरीररचना-विज्ञान, प्रकृति और वायु विज्ञान का भी अध्ययन किया था। इसे उन्होंने चित्रों तथा रेखाचित्रों के साथ कापियों में रिकार्ड किया था। कलाकार के रूप में उनकी सबसे प्रसिद्ध कृति 'मोना लिसा' है जिसे दुनिया की सबसे मूल्यवान पेंटिंग समझा जाता है।

श्रीनिवास रामानुजम (1887-1920) हमारे ही देश के प्रतिभासम्पन्न गणितज्ञ थे। अपनी 16 वर्ष की आयु में ही उन्होंने 6,000 प्रमेय इकट्ठे कर लिये थे जिन्हें स्वयं उन्होंने ही हल किया था। हालांकि, उन्हें अपने समय में पश्चिम में प्रचलित गणित की जानकारी नहीं थी, फिर भी, उन्होंने स्वयं अनेकों प्रमेयों का विकास किया। इंग्लैंड में रामानुजम प्रथम ऐसे भारतीय थे जिन्हें रायल सोसाइटी आफ लन्दन का सदस्य चुना गया। वितत भिन्न (कन्टीन्यूड फ्रेक्शन) पर उन्हें जो महारथी थी उसे आज तक कोई भी गणितज्ञ नहीं प्राप्त कर सका।

ऐसा ही एक विलक्षण प्रतिभा सम्पन्न बालक जिसने संगीत में नाम कमाया आस्ट्रिया का संगीतकार डब्लू. ए. मोटजार्ट (1756-1842) था। उसने 5 वर्ष की आयु में ही संगीत की रचना शुरू कर दी थी। उसके बाद शीघ्र ही वह वायलिन बजाने में भी माहिर हो गये और पब्लिक के लिए प्रोग्राम देने लगे। 16 वर्ष की आयु में उन्होंने वायलिन बजाना छोड़ दिया क्योंकि उन्हें प्यानों में ज्यादा रूचि हो गई थी। इस आयु में ही वह प्यानो बजाने में विशेषज्ञ हो गये थे।

जीवन बीमा आपके भविष्य को सुरक्षित रखने का सबसे बुद्धिमत्तापूर्ण रास्ता है। इसके बारे में और जानकार हो जाइये।

भारतीय जीवन बीमा निगम

अगली बार: जीवन और हनु समझ जाते हैं कि नोबल पुरस्कार क्या है।

तितली रानी, तितली रानी, आओ हमारे संग
बाग़ हमारा देखो, देखो फूलों के रंग
पंखों पर तुम्हारे हम जॅम्स सजाएँगे
आज तुमको जॅम्स की तितली बनाएँगे
GEMS
कितनी मधुर कल्पना,
झट ले आओ जॅम्स अपना!
कॅडबरिज़
चॉकलेट्स
कॅडबरिज़ जॅम्स हैं ही ऐसे, मीठी मीठी कल्पनाओं जैसे!
OBM/6642/HN
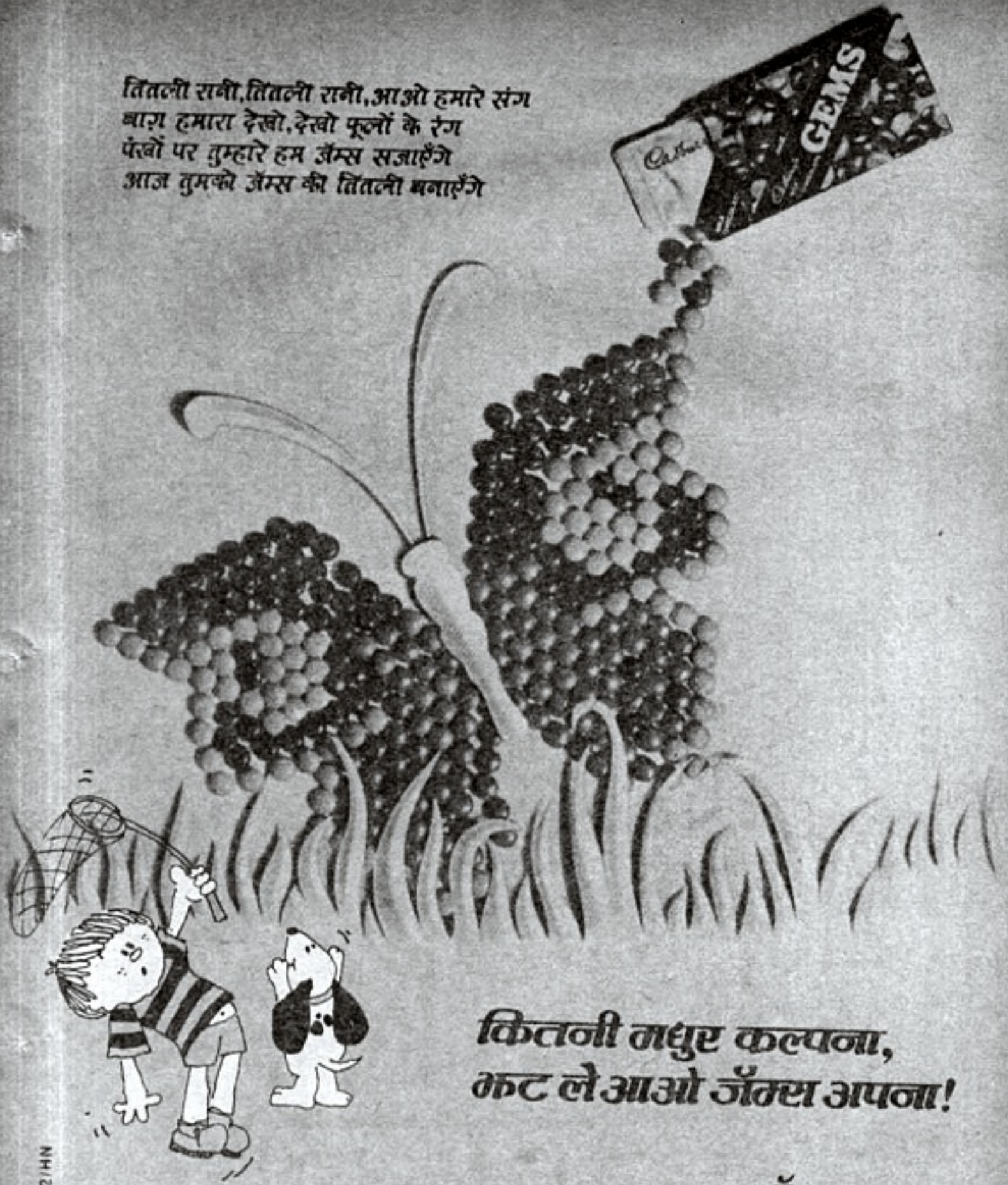
Results of Chandamama—Camlin Colouring Contest No. 19 (Hindi)

1st Prize: Sudha I. Vasu, Bombay-67; *2nd Prize*: Shyamal Naskar, Rourkela-3; *3rd Prize*: Dinesh Kumar Sharma, Moradabad; *Consolation Prizes*: S. Tharkeswar Pattnaik, Balasore; Anupa Israni, New Delhi-64; Sunita Srivastav, Aligarh; Pritam Singh, Karnal 132 001; V. Sahab Pyari, Shirpur Kaghaznagar.

चन्दामामा

संस्थापक : 'चक्रपाणी'
संचालक : नागिरेड्डी

"ग्रहण-स्नान" कहानी हमें यह बताती है कि पूजा-अर्चना के प्रति अपार श्रद्धा दिखाने का अभिनय करनेवाले लोग धन कमाने के लिए किस तरह गलत-सलत रास्तों पर क़दम बढ़ाने को तैयार हो जाते हैं।

अमर वाणी

बुद्धेर्बुद्धिमतां लोके, नास्त्य गम्यं हि किंचन ।
बुद्धयाहता यतो नंदाः, चाणक्ये नासिपाणिना ॥

[प्रखर बुद्धि रखनेवालों के लिए इस दुनिया में कोई भी असंभव कार्य नहीं है । अपार शस्त्र-अस्त्रों का बल रखनेवाले नंद राजाओं को क्या चाणक्य ने अपने बुद्धि-बल के द्वारा पराजित नहीं किया ?]

वर्ष : ३३ | अगस्त १९८१ | अंक : १२

एक प्रति : १-७५ : : वार्षिक चन्दा : २१-००

मन-मुटाव

गली में कुत्तों के भूँकने की आवाज सुन कर जानकीराम जाग पड़ा। तब तक आधी रात बीत चुकी थी। कुत्तों के भूँकने का कारण जानने के ख्याल से जानकीराम किवाड़ खोलकर बाहर आया। उस अंधेरे में एक गधे को देख गली के सारे कुत्ते भूँक रहे थे। जानकीराम ने कुत्तों को भगाया, जब वह मकान के अन्दर जाने लगा, तब उसकी दृष्टि बाहर चबूतरे पर लेटे हुए एक अजनबी पर पड़ी।

"कौन है?" जानकीराम ने पूछा।

पर उसे कोई जवाब न मिला। जानकीराम ने उस अजनबी की पीठ पर थपथपाया, बुखार की वजह से उसका बदन तप रहा था।

जानकीराम ने कहा–"बाहर भयंकर सर्दी पड़ रही है। तुम्हारी तबीयत ठीक नहीं है। अन्दर आकर सो जाओ।"

वह अजनबी बड़ी मुश्किल से उठ खड़ा हुआ और हाथ जोड़कर जानकीराम को प्रणाम किया। जानकीराम उसे हाथ का सहारा देकर अंदर ले आया। चटाई बिछाकर उसे लिटाया और उस पर कंबल ओढ़ा दिया। वह अजनबी तुरंत सो गया।

इसके बाद किसी के द्वारा जोर से दर्वाजे पर दस्तक देते सुनकर जानकीराम जाग उठा। तब तक सूरज उग चुका था। दर्वाजे पर दस्तक देने वाली स्त्री उसकी पत्नी रत्ना थी। वह पिछली रात को अपने रिश्तेदारों की शादी में भाग लेने गई और सवेरा होते ही घर लौट आई।

"तुम क्यों अभी तक सो रहे थे? सूरज के उगे बड़ी देर हो गई है!" यों कहते रत्ना घर के अन्दर आ गई। चटाई पर कंबल ओढ़े लेटे हुए व्यक्ति को देख रत्ना

माधव प्रसाद

ने अपने पति से पूछा–"कोई मेहमान आये हुए मालूम होता है। कौन हैं?"

"न मालूम कौन है? मैं भी नहीं जानता!" इन शब्दों के साथ जानकीराम ने सारा समाचार सुनाया।

"उफ़! बेचारे को गरम-गरम दूध पिला दे तो थोड़ा चंगा हो जाएगा। तुम उसे जगाकर हाथ-मुँह धोने के लिए कह दो।" यों कहकर वह जल्दी-जल्दी रसोई घर में चली गई। जानकीराम ने उस अजनबी को जगाने के लिए उसके बदन पर हाथ रखा, मगर दूसरे ही क्षण वह चौंक पड़ा। रात को अंगारे जैसे तपने वाला उसका बदन अब बर्फ़ जैसा ठण्डा मालूम हो रहा था।

"ओह! यह तो मर गया है!" घबराये हुए चिल्ला उठा।

ये बातें सुन रत्ना रसोई घर से दौड़ी-दौड़ी आ पहुँची। विकल होकर बोली–"बेचारे मर गये? अब हम क्या करें? न मालूम ये किस गाँव के हैं?"

इसके बाद जानकीराम ने उस अजनबी की कमर टटोल कर देखा। रुपयों की थैली उसके हाथ से लग गई। उसने उस थैली को खोलकर नीचे उड़ेल दिया। रुपयों के साथ एक खत भी नीचे गिर पड़ा। वह खत एक माँ के द्वारा अपने बेटे के नाम लिखा गया था। उसमें लिखा हुआ था: "बेटा, नारायण! हमारे गाँव के एक आदमी ने मुझ से बताया कि तुम्हें बुखार हो आया है! अब तुम्हारी तबीयत कैसी है? यहाँ पर तुम्हारे छोटे भाई की हालत कुछ अच्छी नहीं है! वह यह सोचते हुए परेशान है कि अपनी बेटी की शादी के लिए तीन हज़ार रुपये कैसे जमा करे! यह जो रिश्ता पक्का हो गया है, बहुत बढ़िया है। इस हालत में तुम लोगों को अपने पुराने मन-मुटाव और जिद्दी को भूल जाना चाहिए। राधा की शादी के लिए तुम्हें मदद करनी ही होगी। इसलिए इस खत के पाते ही यदि तुम्हारी तबीयत अच्छी हो तो रुपये लेकर जल्दी चले

आओ। इधर हमने मकान बदल दिया है। पता नीचे दे रही हूँ। तुम इस खत को अपने साथ लाओगे तो घर का पता आसानी से लगा सकते हो।"

चिट्ठी पढ़ने पर जानकीराम को अब सारी हालत मालूम हो गई। उसने अपनी पत्नी से कहा–"बेचारा अपनी भतीजी की शादी के वास्ते रुपये लेकर चल पड़ा और रास्ते में ही मर गया है। अच्छा हुआ कि उसने इस चिट्ठी को अपने साथ रख लिया! हमें कम से कम उसके छोटे भाई के मकान का पता लग गया।"

"तुम तुरंत चले जाओ। इस आदमी के परिवार वालों को यह चिट्ठी और रुपये देकर सारी हालत उन्हें समझा दो। तुम्हारे लौटने तक मैं बरातियों के साथ ही रहूँगी।" रत्ना ने समझाया।

इसके बाद जल्द ही पति-पत्नी ने घर पर ताला लगाया। जानकीराम किराये की गाड़ी पर नारायण के छोटे भाई के गाँव के लिए चल पड़ा। मकान का पता लगाने में उसे कोई दिक़्क़त न हुई, मगर घर में क़दम रखते समय घर के भीतर से आने वाली बातें सुन वह दरवाजे पर ठिठक कर रह गया।

"माँ रुपये नहीं मिले। मैं वर के पिता को समझाऊँगा कि वे कोई दूसरा रिश्ता ठीक कर ले!" कोई कह रहा था, शायद वह छोटा भाई हो!

"बेटा, यह तुम क्या कहते हो? यह रिश्ता बहुत ही बढ़िया है! रुपयों के न मिलने पर इस रिश्ते को तोड़ बैठेंगे? मैंने तुम्हारे बड़े भाई को रुपये लाने के लिए खत लिख दिया है। वह ज़रूर रुपये लेकर वक़्त पर पहुँच जाएगा।" माँ समझा रही थी।

"माँ, तुमने मुझसे कहे बगैर बड़े भाई को चिट्ठी क्यों लिख दी? भाई के रुपये मैं छुऊँगा तक नहीं! उस धन से मैं अपनी बेटी की शादी करना नहीं चाहता।" छोटे भाई ने कहा।

"अरे बेटा, छोटी सी बात को लेकर तुम भाइयों के बीच जो मन-मुटाव हो गया है, उसकी वजह तुम दोनों एक-दूसरे का चेहरा तक नहीं देखते हो! मैंने सोचा था कि कम से कम राधा की शादी के बहाने ही तुम दोनों फिर एक हो जाओगे।" माँ भर्राये हुए स्वर में कह रही थी।

इतने में जानकीराम ने दर्वाजे पर दस्तक देकर पूछा-"क्या नारायण के छोटे भाई का मकान यही है?"

भीतर से चालीस साल का आदमी दर्वाजा खोलकर आश्चर्य में आ गया और बोला-"आप कौन हैं? अंदर आ जाइये।"

जानकीराम अंदर जाकर कुर्सी पर बैठ गया। रुपयों की थैली मेज पर रखकर चिट्ठी छोटे भाई के हाथ दे दी। छोटे भाई ने चिट्ठी पढ़कर कहा-"यह चिट्ठी तो मेरी माँ के द्वारा बड़े भैया के नाम लिखी गई है। वे खुद यहाँ आने में संकोच करते होंगे, इसलिए रुपये भेज दिया होगा। आप कृपया रुपयों की उस थैली को मेरी आँखों के सामने से हटाइये।"

"आपके बड़े भाई खुद आना चाहते थे, लेकिन आ नहीं पाये। आप दोनों की मुलाक़ात अब इस ज़िंदगी भर में नहीं हो सकती।" इन शब्दों के साथ जानकीराम ने सारा किस्सा सुनाया।

अब छोटे भाई का चेहरा एकदम सफ़ेद पड़ गया। माँ तड़प कर रो पड़ी। अपनी हथेलियों में अपने चेहरे को ढकते छोटा भाई रो पड़ा-"भैया, मुझे माफ़ कर दो।"

उसके रोते हुए देखकर भी थोड़ी भी सहानुभूति दिखाये बिना जानकीराम बोला-"ज़िंदा आदमी की क़ीमत लगाना मुश्किल है। आपके बड़े भाई का अगर आपके प्रति बहुत ज्यादा प्यार न होता तो तबीयत के खराब होने के बावजूद भी रुपये लेकर क्यों चल पड़ता? आप अपने भाई के प्रेम से आज तक वंचित रहे! अब उसे चाहकर भी पा नहीं सकते!"

इतने में पचास साल का एक आदमी वहाँ पर आया और उसने पूछा–"यह सब क्या है? आखिर क्या हुआ है?"

उस आदमी को देखते ही माँ और छोटा भाई भी रोना बंद कर चकित हो देखते रह गये। छोटा भाई उसके समीप जाते हुए बोला–"क्या आप ज़िंदा हैं? मैं तो बेवकूफ़ ठहरा! आपकी महानता को समझ न पाया!" यों कहते अपने बड़े भाई के पैरों पर गिर पड़ा।

जानकीराम समझ गया कि वह व्यक्ति वही नारायण है, जिसे अब तक वे लोग मरा हुआ समझते थे।

सारा समाचार जानकर नारायण ने हँसते हुए कहा–"मैं रुपये लेकर परसों ही घर से निकल पड़ा। राधा के वास्ते रेशमी साड़ी खरीदने के लिए मैं शहर के एक बाजार में गया। वहाँ पर एक बूढ़ा भीख माँगते मेरे पीछे पड़ा। उस पर मुझे दया आ गई। मैंने रुपयों की थैली निकाल कर उसे एक रुपया दिया। इसके बाद मैं दूकान में पहुँचकर साड़ियों का चुनाव करने लगा। वह बूढ़ा मेरे पीछे लगा हुआ था, इसलिए मुझे उस पर संदेह हुआ। अखिर मैंने साड़ी खरीद ली और रुपयों की थैली निकालने को हुआ तो देखता हूँ कि थैली गायब है। इसके बाद दूकान से सीधे मैं घर पहुँचा, रुपये लेकर यहाँ चला आया। तुम्हारे घर में जो आदमी मर गया है, वह शायद वही चोर होगा।" नारायण ने जानकीराम को समझाया।

"अच्छा हुआ, उस चोर ने मरकर हम लोगों का भला किया। उसकी वजह से तुम दोनों भाई फिर से मिल गये।" माँ ने अपनी खुशी प्रकट करते हुए कहा।

"मैं चलता हूँ! घर पर आगे का कार्यक्रम देखना है!" यों कहते जानकीराम उठ खड़ा हुआ।

"अगले महीने हमारी बेटी की शादी है। आप को परिवार के साथ ज़रूर आना होगा।" यों कहते दोनों भाइयों ने जानकीराम को विदा किया।

[१५]

[समरसेन शिवदत्त की खोज में चल पड़ा और एक तालाब में मगरमच्छ के मुँह में जाने वाले अपने सैनिकों को बचाया। उनके द्वारा समरसेन को व्याघ्रदत्त का थोड़ा सा पता चला। उस वक्त उसे एक पेड़ की डाल से लटकनेवाला एक पत्र मिला। उसी समय अचानक पहाड़ पर से कुछ सैनिक समरसेन पर बाण चलाने लगे। बाद–]

समरसेन को इस बात का पता लगाने में ज्यादा देर न लगी कि उस पर बाणों की वर्षा करने वाले कौन हैं। पहाड़ों को भी गुंजाने वाले ये नारे उसे साफ़ सुनाई देने लगे :

"व्याघ्रदत्त की, जय!" "व्याघ्र मण्डल की जय!"

इस पर समरसेन ने अपने सैनिकों को सचेत किया–"ये लोग व्याघ्रदत्त के सिपाही हैं! इन्हें हमारा पता चल गया है। ये लोग हमको घेर कर हमारा अंत करना चाहते हैं! इसलिए तुम लोग सावधान रहो!"

व्याघ्रदत्त के सिपाही पहाड़ी चट्टानों के पीछे छिपकर समरसेन तथा उसके सैनिकों पर बाणों का प्रयोग करते आगे बढ़ने लगे। उस मुसीबत से अपनी जान बचाने के लिए समरसेन को एक ही रास्ता

दिखाई दिया। वह यह था कि चट्टानों के पीछे छिपते हुए उस प्रदेश को छोड़ दूर चला जाना!

इसके बाद समरसेन के साथ उसके सैनिक भी चुपचाप चट्टानों के पीछे छिपते सामने वाले सुरंग की ओर रेंगने लगे। उन्हें इस बात का डर अधिक न था कि न मालूम कि उस सुरंग के पीछे क्या है! उनका मुख्य कर्तव्य व्याघ्रदत्त के जाल से बचकर भाग निकलना था!

आखिर वे सब सुरक्षित रूप से एक अंधेरी गुफा के पास पहुँचे। व्याघ्रदत्त के सिपाहियों की चिल्लाहटें धीरे-धीरे मंद पड़ने लगीं। समरसेन ने कल्पना की कि वे लोग उनकी खोज करते दूसरी दिशा में चले गये होंगे!

तब तक दुपहर हो चुकी थी। समरसेन उस अंधेरी गुफा में टटोलते हुए आगे बढ़ने लगा। उसे गुफा के दूसरे छोर पर सूरज की पतली रोशनी दिखाई दी। थोड़ा और आगे बढ़कर समरसेन गुफा के उस पार पहुँचा।

वहाँ के दृश्य को देख समरसेन विस्मय में आ गया। शिवदत्त ने अपने नक़्शे में जो उजड़े हुए महल अंकित किये थे, वे सामने साफ़ दिखाई दे रहे थे। वह ऐसा मालूम हो रहा था कि भूकंप की वजह से एक महा नगर ध्वस्त हो गया हो! साथ ही बड़ी-बड़ी इमारतों की दीवारें टूटकर बिखरी पड़ी हैं। कुछ शिला-स्तम्भ टूटकर किसी भी क्षण पूर्ण रूप से गिरने की हालत में हैं!

इसमें कोई संदेह नहीं रह गया था कि शिवदत्त ने अपने नक़्शे में जिस शिथिल नगर को अंकित किया था, वह यही है! शायद शिवदत्त इसके भीतर छिपा होगा! इसलिए समरसेन ने सोचा कि हिम्मत करके आगे बढ़ना उचित होगा! इसके बाद समरसेन और उसके सैनिक उस शिथिल नगर को देखते चकित हो खड़े रह गये।

अब समरसेन वहाँ से निकलकर खण्डहरों के बीच जाने के ख्याल से चलने को हुआ, भीतर उस सारे प्रदेश को गुँजा देने वाली शंख ध्वनियाँ और चिल्लाहटें सुनाई दीं। दूसरे ही क्षण समरसेन ने देखा कि व्याघ्रदत्त पचास-साठ सिपाहियों को साथ ले उन खण्डहरों की ओर चला आ रहा है!

समरसेन ने अपने सैनिकों को सचेत किया और चौकन्ने हो देखने लगा कि व्याघ्रदत्त के सैनिक किस तरफ़ जानेवाले हैं! व्याघ्रदत्त का व्यवहार देखने पर समरसेन को लगा कि वह समरसेन की बात बिलकुल भूल गया है!

व्याघ्रदत्त इस तरह ठाठ से आगे-आगे चला आ रहा था, मानो वह जिस महान कार्य को साधना चाहता था, उसे साध लिया हो। उसके सैनिक कोलाहल करते चले आ रहे थे।

ससमरसेन के मन में अचानक यह शंका पैदा हो गई कि व्याघ्रदत्त ने कहीं शिवदत्त का पता लगा लिया हो! पर व्याघ्रदत्त के पीछे कोई बन्दी बने दुश्मन न थे। इस पर समरसेन ने अपने मन में सोचा—"शायद व्याघ्रदत्त को अपूर्व शक्तियों वाला शाक्तेय के त्रिशूल का पता चल गया हो।"

पर व्याघ्रदत्त उन खण्डहरों के बीच अपने सैनिकों को ले जाने लगा। वह इस तरह अपने सैनिकों को रास्ता दिखा रहा था, मानो उसने अपने लक्ष्य का पहले ही

अपने वचन का जरूर पालन करूंगा। लेकिन तुम लोगों को एक साहसपूर्ण काम करना होगा।"

"हम लोग हर प्रकार के साहसपूर्ण काम करने को तैयार हैं! आज्ञा दीजिए।" सभी सैनिक एक स्वर में चिल्ला उठे।

व्याघ्रदत्त मुस्कुरा कर बोला-"इस शिथिल नगर में शीघ्र ही हमारी इच्छाओं की पूर्ति होने जा रही है। लो, सामने वाले उस महल को देखो! उसका सिंहद्वार टूटकर मलबे के नीचे ढका हुआ है। तुम लोग जल्दी-जल्दी उस मलबे को हटाकर रास्ता बनाओ। हम जिस अमूल्य वस्तु की खोज कर रहे हैं, वह उसी महल के अन्दर छिपी पड़ी है।"

व्याघ्रदत्त की ये बातें सुन सारे सैनिक खुशी के मारे नाच उठे। वे लोग एक दूसरे को सावधान करते उस शिथिल भवन के पास पहुंचे। कुछ लोग कुदाल लेकर द्वार को रोके गिरी हुई शिलाओं को हटाने लगे।

इस उत्साह में सिपाहियों ने अचानक पैदा होने वाले खतरे की ओर जरा भी ध्यान न दिया। उस शिथिल भवन के खंभे व दीवारें नींव से हिल गई थीं और झुक कर गिरने की हालत में थीं।

निर्णय कर लिया हो! समरसेन इसी मौक़े की ताक में था। इसलिए वह उन चट्टानों के पीछे छिपते अपने सैनिकों के साथ खण्डहर बने एक महल के प्रांगण में पहुंच गया। वहां पर आधे गिरे स्तम्भों के पीछे छिपकर समरसेन व्याघ्रदत्त पर निगरानी रखने लगा।

अपने सैनिकों के आगे चलने वाला व्याघ्रदत्त अचानक एक जगह रुक गया और बोला-"हे व्याघ्र योद्धाओं, हमारी मेहनत के सफल होने का समय आ गया है! मैंने यह वचन दिया था कि तुममें से हर एक आदमी को एक-एक देश का राजा बनाऊंगा! यक़ीन करो कि मैं

CHITRA
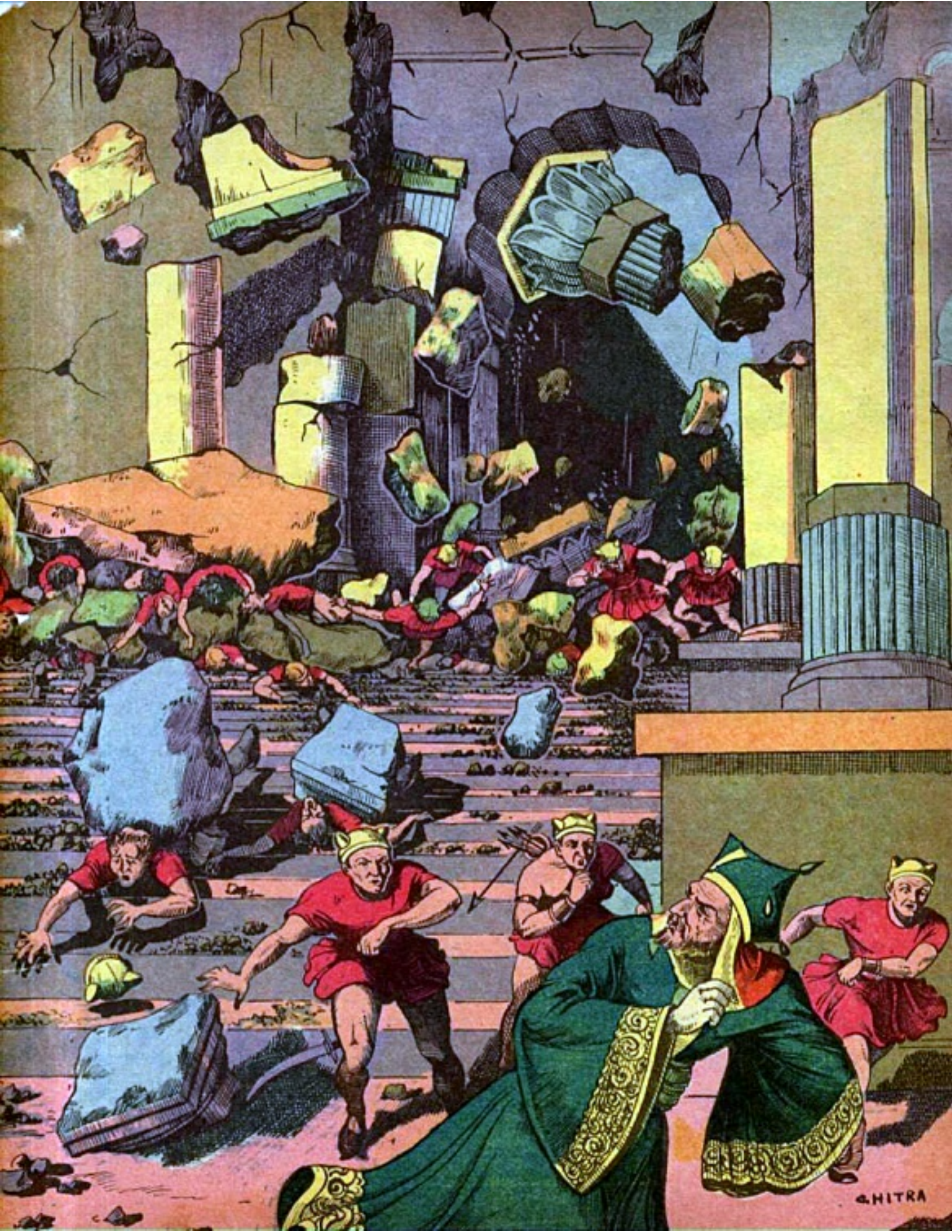
अपने सैनिकों को खतरे में डालना तो नहीं चाहता? इतने में बड़ी भारी ध्वनि के साथ शिथिल भवन अचानक एकदम ढह गया। गिरने वाले खंभों व दीवारों के नीचे दबकर व्याघ्रदत्त के कई सैनिक हाहाकार करते मर गये। कुछ सैनिक बुरी तरह से घायल हुए और जान बचा कर भाग आये।

यह भयंकर दुर्घटना पलक मारने के अन्दर हो गई। जान बचाकर बाहर निकले कुछ सिपाहियों के साथ व्याघ्रदत्त दूर जा खड़ा हुआ। उसकी आज्ञा का पालन करते जान गँवाने वाले सैनिकों की लाशों को देखने के बाद भी व्याघ्रदत्त का दिल बिलकुल पसीज न उठा और वह निश्चल खड़ा रह गया।

"व्याघ्रेश्वरी के साथ कोई अपचार हो गया है। इसीलिए इतने सारे सैनिक सिंह द्वार के आगे बलि हो गये हैं! अब हमें डरने की कोई जरूरत नहीं है। तुम लोग हिम्मत के साथ रहो।" इन शब्दों के साथ व्याघ्रदत्त ने अपने हाथ के एक नक़्शे को उन्हें दिखाकर समझाया—"मैं इस वक़्त तुम सबको अद्भुत शक्तियाँ रखने वाले शाक्तेय के त्रिशूल का स्थान बताना चाहता हूं। उसके प्रभाव से बचे हुए हम्हीं लोग इस दुनिया के

समरसेन उस शिथिल भवन से दूर छिपे रहकर उस दृश्य को देख रहा था। उसे इस बात की शंका हुई कि व्याघ्रदत्त के आदेश का पालन करने में निमग्न सैनिक दीवार या खंभों के गिरने पर बुरी मौत मरने जा रहे हैं।

व्याघ्रदत्त थोड़ी दूर पर खड़े हो चट्टानों को हटाने वाले अपने सैनिकों में उत्साह भर रहा था। वह जब तब दीवारों तथा खंभों की ओर उत्सुकतापूर्वक ताक रहा था, जिससे ऐसा मालूम हो रहा था कि वह भी उस होने वाले खतरे पर शंका कर रहा है।

समरसेन के मन में हठात् यह विचार आया कि व्याघ्रदत्त जान-बूझ कर कहीं

राजाधिराजा बन सकते हैं! लो, तुम लोग अच्छी तरह से देख लो! त्रिशूल का स्थान इस नक़्शे में साफ़ दिखाया गया है! हाथियों वाले वन में विष वृक्ष से सौ गज की दूरी पर मृत वीरों की समाधि के नीचे गुरु द्रोही के कंकाल के अन्दर शाक्तेय का त्रिशूल छिपा कर रखा गया है।"

दूर पर छिपे रहकर ये बातें सुनने वाला समरसेन अचरज में आ गया और डर के मारे उसका शरीर कांप उठा। फिर संभलकर अपने मन में सोचने लगा—जिस अपूर्व शक्तियों वाले त्रिशूल के वास्ते उस मांत्रिक द्वीप में इतनी सारी लड़ाइयां और हत्याएँ हो रही हैं, वह त्रिशूल आखिर दुष्ट व अत्याचारी व्याघ्रदत्त के हाथ में पड़ने जा रहा है।

समरसेन के दिल को यह चिंता कुरेदने लगी कि अब क्या किया जाय? आख़िर शिवदत्त कहाँ पर है? क्या वह त्रिशूल का वृत्तांत जानता है? अपने छे सैनिकों के साथ व्याघ्रदत्त का सामना करना उचित है या नहीं? या अपना विचार बदल कर वापस लौटना उचित होगा?

बड़ी देर तक सोचने के बाद भी समरसेन किसी निर्णय पर पहुँच न पाया। यदि व्याघ्रदत्त के हाथ वह त्रिशूल आ गया तो फिर उसका सामना करना किसी के लिए भी संभव न होगा। मंत्र-तंत्र विद्याओं में असाधारण व्यक्ति माने जाने वाले एकाक्षी मांत्रिक तथा चतुर्नेत्र को भी उसके सामने सर झुकाना होगा। धन के ढेरों से भरी नाव तथा उसकी रक्षा करने वाली नागकन्या भी उसके हाथों में आ जायेंगी।

ऐसी मुसीबत के वक़्त उसकी मदद सिर्फ़ चतुर्नेत्र ही कर सकता है! मगर चतुर्नेत्र को इस बात का पता कैसे चलेगा? नागकन्या को पाने का प्रयत्न करने वाला वह चतुर्नेत्र शाक्तेय के इस त्रिशूल का

समाचार जानता है या नहीं? उस त्रिशूल को पाने पर कोई भी इस सारे द्वीप पर ही नहीं, सारी दुनिया पर विजय प्राप्त कर सकता है!

समरसेन इन्हीं विचारों में डूबा हुआ था कि उसे व्याघ्रदत्त की ये आवाज़ सुनाई दी–"मेरे साथियो, तुम सब लोग सावधानी से सुन लो! कल महान पर्व का दिन है! अमावस्या है, साथ ही रविवार है! इसलिए हम लोग आज रात को खूब आराम करेंगे! कल रात को ठीक एक बजे हमें हाथियों वाले वन में प्रवेश करना होगा!"

व्याघ्रदत्त ने यों अपने सैनिकों को सूचना दी, तब वह समीप की एक शिला पर जा बैठा। सैनिक भी अपने अपने हथियार नीचे डालकर उसके चारों तरफ़ वलयाकृति में बैठ गये।

व्याघ्रदत्त की बातों ने समरसेन के दिल में आशा जगाई। अभी उसके सामने चौबीस घंटों का समय है। इस बीच उसे किसी भी तरह से सही, गफ़लत की नींद सोने वाले व्याघ्रदत्त पर अचानक हमला करके उसका अंत करना होगा! यह निश्चय कर समरसेन ने सोचा कि फिलहाल वह और उसके सैनिक थोड़ी देर आराम कर सकते हैं!

यों विचार करके समरसेन झट पीछे की ओर घूम पड़ा। उस वक़्त वह जिस शिला से सटकर खड़ा हुआ था, वह शिला-स्तम्भ बड़ी ध्वनि के साथ नीचे गिर पड़ा।

उस ध्वनि के सुनते ही चोट खाये हुए शेर की भांति व्याघ्रदत्त जाग उठा और अपने सैनिकों को सचेत करते उठ खड़ा हुआ। उसके साथ उसके सैनिक भी अपने अपने हथियार हाथों में लेकर उठ खड़े हुए। उस वक़्त व्याघ्रदत्त की नज़र सीधे समरसेन के छिपे हुए शिथिल भवन पर जा पड़ी।

(और है)

आदर्श-राजा

हठी विक्रमार्क पेड़ के पास लौट आया, पेड़ पर से शव उतार कर कंधे पर डाल हमेशा की भांति चुपचाप श्मशान की ओर चलने लगा, तब शव में स्थित बेताल ने कहा—"राजन, इस दुनिया में कुछ लोग उत्तम कार्य करके आदर्श व्यक्ति बन जाते हैं। लेकिन कुछ लोग ऐसे भी हैं जो पाप कार्य करके आदर्श प्राय बने हैं। इसके उदाहरण के रूप में मैं आप को गुणसिंह नामक राजा की कहानी सुनाता हूँ। श्रम को भुलाने के लिए सुनिये!"

बेताल यों सुनाने लगा : प्राचीन काल में विदर्भ देश पर राजा जयसिंह शासन करते थे। उनके दो पुत्र थे। बड़े पुत्र का नाम वीरसिंह और छोटे का नाम गुणसिंह था। गुणसिंह बचपन से ही राज्य शासन तथा क्षत्रियोचित विद्याओं पर बड़ी अभिरुचि रखता था। उसने

बेताल कथाएँ

मंत्री माणिक्य वर्मा से राजनीति और सेनापति शूरसेन के यहाँ क्षत्रियोचित सारी विद्याएँ पूर्ण रूप से सीख लीं। लेकिन वीरसिंह इसके विपरीत भोग विलासों में डूबा रहता था।

जब दोनों राजकुमार बड़े हुए तब राजा जयसिंह ने राज्य के रिवाज़ के अनुसार वीरसिंह को गद्दी पर बिठाना चाहा। यह समाचार मिलते ही गुणसिंह ने अपने गुरु मंत्री और सेनापति को अपने अनुकूल बनाया और वीरसिंह के राज्याभिषेक के पिछले दिन की रात को अपने पिता और बड़े भाई को कारागार में बन्दी बनाया, अपने राज्याभिषेक का इंतजाम किया।

गुणसिंह के राज्याभिषेक के समय ब्राह्मण मंत्र-पठन करने लगे। उस वक़्त मंत्री माणिक्य वर्मा रत्न खचित मुकुट गुणसिंह के सर पर पहनाने को हुआ। इस पर गुणसिंह ने पूछा–"महामंत्रीजी, आप यह क्या कर रहे हैं?"

"महाराज, यह करोड़ों रुपयों के मूल्य के रत्न खचित मुकुट है। कई पीढ़ियों से इस मुकुट को धारण करके आपके वंश के लोग राज्य करते आ रहे हैं!" मंत्री ने जवाब दिया।

"क्या रत्न खचित मुकुट अपने सर पर धारण किये बिना ही राजा प्रजा पर शासन नहीं कर सकते?" गुणसिंह ने पूछा।

मंत्री को मौन देख गुणसिंह ने फिर पूछा–"आज से राजमहल में भोग विलासों के पीछे धन का जो दुरुपयोग होता है, उसे रोक दीजिएगा। मैं भी एक अधिकारी हूँ, इसलिए मेरे लिए भी उचित वेतन का इंतजाम कीजिए।"

गुणसिंह के मुँह से ये बातें सुनकर सारे दरबारी विस्मय में आ गये।

उस दिन से गुणसिंह अपने वेतन के अनुरूप सादा जीवन बिताने लगा। उसने जनता की समस्याओं को सुलझाने के लिए नई योजनाएँ अमल कीं, परिणाम स्वरूप कुछ ही दिनों में विदर्भ राज्य संपन्न हो गया।

विदर्भ राज्य के सौ कोस की दूरी पर विरूप राज्य पड़ता था। उस पर राजा चित्रसेन शासन करता था। उसका पुत्र विजयसेन समस्त राजोचित विद्याओं में प्रवीण था। इसलिए राजा चित्रसेन विजयसेन का राज्याभिषेक करके आराम करना चाहता था। उसने एक दिन विजयसेन को बुलाकर समझाया–"बेटा, यह बात सही है कि तुमने राजोचित सारी विद्याएँ सीख लीं, लेकिन इसके साथ एक राजा के लिए पर्याप्त अनुभव की भी ज़रूरत होती है। इसलिए तुम देशाटन पर चले जाओ। तुम्हें कहीं कोई आदर्श राजा मिले, तो उनके साथ शासन की ख़ासियतों का ज्ञान प्राप्त करके लौट आओ।"

अपने पिता के सुझाव के अनुसार विजयसेन देशाटन पर चल पड़ा। रास्ते में कई देशों के राजाओं के चरित्र और उनके शासन की हालत का पता लगाते हुए आखिर विजयसेन विदर्भ देश में पहुँचा। विदर्भ की जनता के द्वारा गुणसिंह के चरित्र और शासन पद्धति का पता लगाया। इसके बाद गुणसिंह से मुलाक़ात करके अपनी इच्छा बताई।

गुणसिंह ने विजयसेन को थोड़े दिन अपने दरबार में बिताने की अनुमति दे दी। थोड़े महीने गुणसिंह के दरबार में बिताकर विजयसेन अपने राज्य को लौट गया और अपना राज्याभिषेक करवाया।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर कहा–"राजन, जब विजयसेन के राज्याभिषेक

का समय आया, तब उसने गद्दी पर बैठे बिना अपने पिता के आदेशानुसार देशाटन किया और गुणसिंह को एक आदर्श राजा माना। उसका यह निर्णय गलत मालूम होता है। गुणसिंह ने राज्य पाने के विचार से अपने पिता और बड़े भाई को कारागार में डाल दिया। ऐसी हालत में वह एक आदर्श राजा कैसे हो सकता है? इस संदेह का समाधान जानते हुए भी न देंगे तो आप का सर फटकर टुकड़े-टुकड़े हो जाएगा।"

इस पर विक्रमार्क ने यों उत्तर दिया—"इस बात का कोई सही सबूत नहीं है कि गुणसिंह ने राज्य के लोभ में पड़कर अपने पिता और बड़े भाई को कारागार में बंद किया है। बुरे व्यसनों के पीछे पागल बने राजा से जनता को बचाने और उत्तम शासन का प्रबंध करने के ख्याल से ही गुणसिंह को उन्हें बन्दी बनाना पड़ा। यदि गुणसिंह ने राज्य के लोभ में पड़कर ही यह काम किया है तो वह भोग-विलासों को तिलांजलि नहीं देता और न जनता के हित के बारे में ऐसी दिलचस्पी लेता। अलावा इसके राजा ने कभी अपने को बड़ा व्यक्ति नहीं माना। उसने सभी अधिकारियों के समान वेतन लेकर मामूली ज़िंदगी बिताई और जनता को सुखी व संपन्न बनाने में सफल हुआ। इस कारण गुणसिंह को एक आदर्श राजा मानने में कोई आपत्ति नहीं है। अगर कोई यह माने कि गुणसिंह ने अपने पिता व बड़े भाई के प्रति द्रोह किया है, यह तो गलत बात है। गुणसिंह ने अपने व्यक्तिगत व्यवहारों की अपेक्षा एक राजा के रूप में उसने जनता की सेवा तथा कल्याण कहाँ तक किया है? इस दृष्टि से गुणसिंह एक आदर्श पुत्र और आदर्श भाई भले ही न माने जाय, मगर उसको एक आदर्श राजा मानने में कोई आपत्ति नहीं है। इसीलिए विजयसेन ने अगर गुणसिंह को एक आदर्श राजा माना।"

राजा के इस प्रकार मौन भंग होते ही बेताल शव के साथ गायब हो पुनः पेड़ पर जा बैठा। (कल्पित)

ग्रहण का स्नान

नागभूषण अपने गाँव के बड़े काश्तकारों में से एक था। वह बड़ा बातूनी भी था। वह कहा करता था कि ऐसा कोई आदमी ढूँढे भी न मिलेगा जिसे भूख न लगती हो और जो कर्ज़दार न हो! लोगों की नज़र में वह भले ही अमीर जैसा दीखे, मगर वह भी ऋण से मुक्त नहीं है। लेकिन कोई उसके यहाँ कर्ज़ माँगने जाते तो ज्यादा ब्याज ऐंठकर उधार देता था।

एक बार नागभूषण का पड़ोसी काश्तकार सोमनाथ उसके यहाँ उधार मांगने गया। सोमनाथ सिर्फ़ दो एकड़ जमीन का मालिक था। उसका खेत नागभूषण के खेत से लगा हुआ था। कई दिनों से नागभूषण सोमनाथ के खेत को अपने खेत में मिलाने का सपना देखा करता था।

मौक़ा पाकर नागभूषण बोला— "सोमनाथ, हमारे गाँव के बहुत से लोग यह बात नहीं जानते कि मैं जरूरत के वक़्त पड़ोसी गाँव के महाजनों के यहाँ से बड़ी रक़म ब्याज देकर कर्ज़ लाया करता हूँ! यह तो हम लोगों की लाचारी है!" यों समझाकर नागभूषण ने सोमनाथ की दो एकड़ जमीन गिरवी रखकर उसकी जरूरत से थोड़ा ज्यादा धन कर्ज़ में दिया।

इसके बाद लगातार दो साल तक समय पर बरसात न हुई, जिससे सोमनाथ के यहाँ अच्छी फसल न हुई। जब नागभूषण के मन में यह विश्वास बंध गया कि सोमनाथ उसका कर्ज़ चुकाने की हालत में नहीं है, तब वह अपना कर्ज़ चुकाने के लिए सोमनाथ पर दबाव डालने लगा। सोमनाथ ने एक और फसल के होने तक मौक़ा देने की बिनती की।

लेकिन नागभूषण ने साफ़ कह दिया— "इस बात का क्या भरोसा है कि अगले

गुरुप्रसाद राय

वर्ष भी वक़्त पर पानी बरसेगा । मैं जिन लोगों के यहाँ से कर्ज लाया हूँ, वे मेरी जान ले रहे हैं । तुमने तो थोड़ा सा कर्ज लिया, अगर तुम्हारा नुकसान होगा तो सिर्फ़ दो एकड़ जमीन का, लेकिन मुझे दस एकड़ जमीन हाथ से धोनी पड़ेगी ।"

सोमनाथ ने भांप लिया कि नागभूषण उसकी जमीन हड़पना चाहता है । उसने लाचार होकर अपनी दो एकड़ जमीन नागभूषण को दे दी । इस घटना के एक हफ़्ते बाद सूर्य ग्रहण आ पड़ा । नागभूषण के मित्रों ने उसे ग्रहण के समय नदी में स्नान करने के लिए बुलाया । पर नागभूषण ने सोचा कि नदी में स्नान करने जाने पर वहाँ के याचकों को दान-दक्षिणा देना पड़ेगा, इस ख्याल से बोला—"दोस्तों, उसी नदी का पानी नहरों के जरिये हमारे गाँव के तालाब में जमा हो जाता है । क्या ग्रहण के समय स्नान करने के लिए तालाब का पानी काम नहीं दे सकता ?"

नागभूषण के दोस्त उसकी कंजूसी से परिचित थे, इसलिए वे सब मन ही मन हँस पड़े और वहाँ से चले गये । थोड़ी देर बाद नागभूषण अकेले तालाब की ओर चल पड़ा । तालाब की मेंड़ पर कुछ भिखारी थे और मेंड़ के नीचे तालाब में नहाते हुए कुछ बूढ़े भी उसे दिखाई दिये ।

नागभूषण भिखारियों की नजर बचाने के ख्याल से मेंड़ से होकर थोड़ी दूर आगे बढा, एक जगह तालाब में उतरने के लिए

चट्टानों पर ज्यों ही उसने पैर रखा, त्यों ही पैर फिसलने से पानी में गिर पड़ा। वह तैरना नहीं जानता था, इसलिए डूबते चिल्लाने लगा–"भाइयो, मुझे बचा लो।"

ठीक उसी समय पड़ोसी गाँव से तालाब की मेंड़ पर से होकर सोमनाथ अपने गाँव लौट रहा था, उसने नागभूषण की आवाज़ को पहचान लिया और दौड़ते जाकर उसे किनारे खींच ले आया।

नागभूषण पत्थरों पर से गिरा था, इस कारण उसके दायें पैर में चोट लगी और मोच भी आ गई। पीड़ा के मारे कराहते हुए अपनी ओर दीनतापूर्ण दृष्टि डालने वाले नागभूषण पर सोमनाथ को दया आ गई और उसने नागभूषण को अपने कंधे पर डाल घर पहुँचा दिया। घर पर एक देहाती वैद्य के द्वारा नागभूषण का इलाज कराया गया। पर इसका कोई फ़ायदा न हुआ, उल्टे उस घाव की जगह और पीड़ा होने लगी। यह खबर मिलते ही कई रिश्तेदार उसे देखने आ पहुँचे। एक ओर नागभूषण घाव की पीड़ा से परेशान था, दूसरी ओर रिश्तेदारों का पिंड छुड़ाने की चिंता उसे और सताने लगी।

उस हालत में एक दिन नागभूषण की बहू की ये बातें उसके कानों में पड़ीं। वह अपने पति से कह रही थी–"इस बूढ़े का कुछ फ़ैसला हो जाये तो बड़ा अच्छा होगा। इन रिश्तेदारों की भीड़ को खिलाते मैं मरती जा रही हूँ!"

ये बातें सुनने पर नागभूषण का दिल बैठ गया। वह जो कुछ कमा रहा है, सो अपने बेटे और पोतों के वास्ते ही। पर अपनी बहू की ये बातें सुनकर भी नागभूषण का बेटा चुप रहा, इस पर उसे और दुख हुआ।

दूसरे दिन सोमनाथ नागभूषण को देखने आया। नागभूषण ने आँखों में आँसू भरकर अपनी बहू की कही हुई बातें सोमनाथ को सुनाईं, तब कहा—"सोमनाथ, मैंने जो कुछ पाप किया, उसीका फल भोग रहा हूँ। मैंने आज तक एक भी पुण्य कार्य नहीं किया। अपनी सारी जिंदगी दूसरों को धोखा व दगा देकर धन कमाने में बिताई। उसीका फल मैं इस वक़्त भोग रहा हूँ।"

सोमनाथ उसे सांत्वना देते हुए बोला—"कहा जाता है कि पश्चात्ताप सभी पापों को धोने की शक्ति रखता है। तालाब में आप ने ग्रहण का स्नान किया, जिसने आपको पुण्यात्मा बनाया। देहाती वैद्य के इलाज से आप का घाव भरने वाला नहीं है, शहर में चलिये, वहाँ पर किसी अच्छे डाक्टर को दिखला देंगे।"

इसके बाद सोमनाथ नागभूषण को शहर में ले गया। मशहूर डाक्टरों के द्वारा उसका इलाज करवाया। नागभूषण एक महीने के अन्दर बिलकुल स्वस्थ हो गया। तब तक सभी रिश्तेदार उसके घर पर जमे हुए थे। उन्हें मीठी बातों से समझा-बुझाकर जैसे-तैसे उनके घर भिजवा दिया। एक दिन सोमनाथ को साथ ले नागभूषण अपने खेत में पहुँचा।

दोनों खेत की मेंड़ पर जा बैठे। नागभूषण ने सोमनाथ का जो खेत हड़प लिया था, उसकी ओर इशारा करते हुए बोला—"सोमनाथ, तुमने कहा था कि ग्रहण के दिन स्नान करके मैं पुण्यात्मा बन गया हूँ, पर यह बात मैं नहीं जानता, लेकिन भविष्य में मैं पापी बनकर जीना नहीं चाहता। कर्ज़ के पीछे मैंने तुम्हारा जो खेत हड़प लिया था, उसे मैं तुम्हें वापस कर देता हूँ।"

चालाक भिखारी

सोनपुर में एक नया भिखारी आ पहुँचा, गली-कूचों में भीख मांगकर अपना पेट भरने लगा। लेकिन उस गाँव के एक मकान का मालिक रोज़ खीझकर उसे डांट देता था—" खाना-वाना कुछ नहीं है। चल बे, भाग जा!"

वह मकान कंजूस रंगनाथ का था। एक दिन रंगनाथ के दर्वाजे पर खड़े हो भिखारी चिल्ला उठा—" माता अन्नपूर्णेश्वरी!"

रंगनाथ डांटकर बोला—" तुम्हें कितनी बार समझाना है कि मेरे यहाँ खाना-वाना नहीं है, भाग जा यहाँ से!" यों कहकर वह किवाड़ बंद करने को हुआ।

इस पर झट भिखारी बोला—" माफ़ कीजियेगा, आज मैं आपके घर खाना मांगने नहीं आया हूँ!"

"तो फिर किसलिए आये हो?" गुस्से में आकर रंगनाथ ने पूछा।

"आप तो रोज यही बताते हैं कि आपके घर खाना नहीं है। इसलिए मैं घर-घर, द्वार-द्वार घूमकर जो भीख लाया हूँ, उसमें से आपको थोड़ा खाना देने आया हूँ। आप अपनी थाली लेते आइये।" यों कहकर उसने अपना झोला खोल दिया।

चन्दामामा की कहानी

एक गाँव में सोमशास्त्री नामक एक बहुत बड़ा विद्वान रहा करता था। वह समस्त शास्त्रों में पारंगत था। अपनी सारी विद्याओं का ज्ञान सभी लोगों को कराने के ख्याल से उसने एक गुरुकुल विद्यालय की स्थापना की।

सोमशास्त्री का यश सुनकर कई विद्यार्थी उसके गुरुकुल में भर्ती हुए, मगर बदक़िस्मती की बात यह थी कि वह जो पढ़ाता था, विद्यार्थियों की समझ में बिलकुल न आता था। धीरे-धीरे गुरुकुल में आनेवाले विद्यार्थियों की संख्या घटती गई।

उन दिनों में सुशांत नामक एक अधेड़ उम्र का व्यक्ति उस गाँव में आया। उसके अपना कहने वाला कोई न था। उसकी सारी जायदाद आग में जलकर भस्म हो गई थी। इस पर वह अपने गाँव को छोड़कर इस गाँव में आया और उस गाँव के सबसे बड़े धनवान के घर पहुँचकर अपनी कहानी सुनाई।

धनवान ने सारी बातें सुनकर समझाया—"मेरे यहाँ आपके करने लायक़ कोई काम नहीं है। इस गाँव में कोई अच्छे गुरु नहीं हैं। अगर आप बच्चों को पढ़ा सके तो आपके खाने-पीने के लिए कोई कमी न रहेगी।"

सुशांत वैसे ज्यादा पढ़ा-लिखा न था, लेकिन यह बात उसने धनवान से नहीं बताई, वह बोला—"महाशय, दस दिन में एक बढ़िया मुहूर्त है। उस दिन में गुरुकुल शुरू करूँगा। इसके लिए कृपया आप उचित स्थान दिलाइये।"

धनवान ने खुशी के साथ मान लिया। इसके बाद सुशांत ने सोमशास्त्री के दर्शन करके पूछा—"महानुभाव, इस गाँव म

आपके जैसे महान विद्वान के होते गुरुकुल का अभाव कैसा ?"

"भाई, मेरे यहाँ काफी पैतृक संपत्ति है, मेरे मन में धन कमाने की लालच नहीं है, पर अपनी विद्या को विद्यार्थियों में बांटने की इच्छा ज़रूर रखता हूँ! मगर न मालूम क्यों विद्यार्थी मेरी विद्या को समझ नहीं पा रहे हैं।" सोमशास्त्री ने दुखी होकर समझाया।

"महानुभाव, आप इस बात की चिंता न कीजियेगा। मैं आप की विद्या को लोगों के बीच बांट दूंगा। आप मुझे पढ़ाइये, मैं उसे अपने शिष्यों को सिखाऊँगा।" सुशांत ने निवेदन किया।

"जो काम मेरे द्वारा न हुआ, वह क्या तुमसे हो सकेगा?" सोमशास्त्री ने शंका प्रकट की।

"आप कृपया संकोच मत कीजियेगा। अगर आप मुझे नहीं पढ़ायेंगे तो मुझे भूखों मरना पड़ेगा।" सुशांत ने कहा।

इस पर सोमशास्त्री ने तर्क किये बिना सुशांत को पढ़ाने को मान लिया। दस दिन तक सुशांत ने सोमशास्त्री के यहाँ थोड़ी-बहुत विद्या सीख ली और अपना गुरुकुल शुरू किया।

सुशांत कुशाग्र बुद्धि वाला था। उसने सोमशास्त्री के द्वारा बताई गई हर बात

को बड़ी श्रद्धा के साथ सीख ली। उसे बच्चों की समझ में आने लायक़ पढ़ाया। उसके पढ़ाने का तरीक़ा बच्चों को बड़ा पसंद आया। कठिन से कठिन शास्त्र भी बच्चे आसानी से समझने लगे।

प्रति दिन सुशांत सोमशास्त्री के यहाँ जाकर कुछ न कुछ सीख लेता, वह जो सीखता, उसे कहानियों के रूप में बदल कर बच्चों को पढ़ाता। धीरे-धीरे सुशांत के शिष्यों की संख्या बढ़ने लगी। उन सबको वह अकेले पढ़ा नहीं पाता था, इसलिए उन कहानियों को पुस्तक के रूप में लिखकर कुछ नये विवरणों के साथ नये लोगों को वह शिक्षा देता था। इस तरह

सुशांत का गुरुकुल एक विश्व विद्यालय के रूप में बदल गया।

सुशांत की प्रतिभा का समाचार उस देश के राजा को मिला। राजा ने सुशांत को बुलवाकर थोड़े दिनों के लिए राजधानी में रहकर राजकुमारों को पढ़ाने का अनुरोध किया।

सुशांत ने विनयपूर्वक राजा से निवेदन किया–"महाराज, इसमें मेरा कोई बड़प्पन नहीं है। सोमशास्त्री नामक महान विद्वान के यहाँ शुश्रूषा करके प्रति दिन में जो कुछ शिक्षा पाता हूँ, उसे बच्चों के वास्ते बदल कर लिखता हूँ। मुझे तो बहुत कुछ सीखना है। इसलिए आप कृपा करके राजकुमारों को विद्यालय में भेज दें तो सबका बड़ा उपकार होगा।"

राजा ने आश्चर्य में आकर पूछा–"अगर सोमशास्त्री आप से कहीं महान हैं तो वे खुद विद्यालय चला सकते हैं न?"

"महाराज, आप से कोई बात छिपी नहीं है, इस सृष्टि को शक्ति प्रदान करने वाले सूर्य की ओर क्या हम आँखें खोल कर देख सकते हैं? अगर हम देख नहीं पाते हैं तो क्या सूर्य की शक्ति झूठी मानी जायेगी? सोमशास्त्री तो सूर्य भगवान के समान हैं! मेरे जैसे लोगों को उन्हीं के द्वारा शक्ति प्राप्त होती है! मैं पंडित सोमशास्त्री के यहाँ से शिक्षा रूपी प्रकाश को प्राप्त करके उसे चन्द्रमा के जैसे दुनिया को बांट देता हूँ!" सुशांत ने कहा।

इस पर राजा ने कहा–"अगर सोमशास्त्री सूर्य भगवान हैं तो उस अपूर्व तेज को चांदनी के रूप में बदलकर मानवों पर बरसाने वाले चन्दामामा हो तुम!" यों सुशांत की तारीफ़ करके राजा ने अपने पुत्रों को उसके साथ गुरुकुल में पढ़ने के लिए भेज दिया।

उस दिन से सुशांत को 'चन्दामामा' नामक नया नाम भी प्राप्त हुआ। साथ ही कठिन विषयों को बच्चों के वास्ते सरल शैली में कह सकने वालों को 'चन्दामामा' कहकर पुकारने की परिपाटी भी चल पड़ी।

मूर्ख राजा

प्राचीन काल में मगध पर राजा विरूप सेन राज्य करते थे, उन दिनों में बोधिसत्व ने एक हाथी का रूप धारण किया। वह हाथी सफ़ेद रंग का था और देखने में ऐरावत जैसा लगता था। इस वजह से मगध राजा ने उसे अपना पट्ट हाथी बनाया।

एक पर्व के दिन सारा मगध राज्य इन्द्र लोक जैसा अलंकृत किया गया। सारे नगर में वैभवपूर्वक जुलूस निकालने का इंतजाम किया गया, इस वास्ते पट्ट हाथी को भी खूब सजाया गया। सैनिक आगे-पीछे चल रहे थे, बीच में राजा पट्ट हाथी के हौदे पर बैठकर जुलूस निकल रहे थे।

राज पथ पर इकट्ठे हुए लोग उत्साह में आकर हाथी की तारीफ़ करने लगे– "ओह, यह गजराज कैसे ठाठ से चल रहा है इसकी सुंदरता देखने पर ऐसा मालूम होता है कि यह किसी चक्रवर्ती राजा का वाहन बनने योग्य है।"

हाथी की यह तारीफ़ सुनकर राजा अपने मन में क्रोधित हुए और सोचने लगे–"जनता को राजा के प्रति अधिक आदर दिखाना चाहिए, लेकिन ये सब इस हाथी के प्रति ज्यादा आदर दिखा रहे हैं। एक भी आदमी हौदे पर बैठे मेरी तरफ़ आँख उठाकर देख नहीं रहा है! सबकी नजर यह हाथी अपनी ओर खींच रहा है। किसी तरह से इसका संहार करवाना चाहिए।"

यों विचार करके राजा ने दूसरे दिन महावत को बुलाकर पूछा–"सुनो, हमारा पट्ट हाथी अच्छी तरह से प्रशिक्षण प्राप्त कर चुका है न?"

"महाराज, उसे प्रशिक्षण देकर हौदे का हाथी मैंने ही बनाया है।"

महावत न बड़े ही आत्म-विश्वास तथा दर्प के साथ जवाब दिया ।

"तुहारी बातों पर मुझे यक़ीन नहीं हो रहा है! मेरा विश्वास है कि यह हाथी बड़ा ही उद्दण्ड है ।" राजा ने कहा ।

"महाराज, ऐसी कोई बात नहीं है!" महावत ने कहा ।

"अच्छी बात है! तुम्हारे कहे अनुसार ऐसा अच्छा प्रशिक्षण अगर इस हाथी को मिला है तो इसे उस सामने दिखाई देने वाली पहाड़ी चोटी पर चढ़ा सकते हो?" राजा ने पूछा ।

"क्यों नहीं महाराज? मैं चढ़ा सकता हूँ!" यों कहकर महावत ने कुछ ही क्षणों में हाथी को पहाड़ी शिखर पर चढ़ा दिया।

इसके बाद राजा अपने परिवार के साथ हाथी के पीछे पहाड़ पर चढ़ गये। पहाड़ी शिखर थोड़ी दूर तक समतल था और इसके बाद नुकीला था। राजा ने वहाँ पर हाथी को रोकने का आदेश दिया। तब बोले–"मैं अब देखना चाहता हूँ कि तुमने हाथी को कैसा प्रशिक्षण दिया है! क्या तुम इस हाथी को उसके तीन पैरों पर खड़ा कर सकते हो?"

दूसरे ही क्षण महावत ने हाथी के सर पर अंकुश छुआकर इशारा करते हुए कहा–"बाबा, राजा का आदेश है कि तुम अपने तीन पैरों पर खड़े हो जाओ।"

हाथी ने ऐसा ही किया। इस पर राजा ने कहा–"शाबाश, बहुत बढ़िया है!"

फिर बोले–"अब क्या तुम हाथी को उसके आगे के पैरों पर खड़ा कर सकते हो?"

महावत ने इशारा करते ही हाथी अपने अगले पैरों पर खड़ा हो गया। इस पर राजा फिर बोले–"देखो, हाथी क्या अपने पिछले पैरों पर खड़ा हो सकता है? आज्ञा देकर दिखाओ।" तत्काल हाथी अपनी पिछली टांगों पर खड़ा हो गया।

"क्या यह हाथी एक ही पैर पर खड़ा हो सकता है?" राजा ने पूछा।

हाथी बड़ी आसानी से एक ही पैर पर खड़ा हो गया। इतनी सारी यातनाएँ देने पर भी हाथी पहाड़ की चोटी पर से नीचे न गिरा, तब राजा मन ही मन दुखी हो बोले–"ऐसे काम तो थोड़ा बहुत प्रशिक्षण प्राप्त कोई भी हाथी कर सकता है। मैं अब बस, एक परीक्षा और लेना चाहता हूँ!"

"महाराज, ऐसा ही कीजिए! बताइये वह परीक्षा कैसी?" महावत ने पूछा।

"हाथी जैसे अपने पैरों की मदद से पहाड़ पर चल सकता है, वैसे ही हवा में भी उसे चलाइये। यह मेरी आज्ञा है।" राजा ने कहा।

ये बातें सुनने पर महावत को राजा का कुविचार मालूम हो गया। पर महावत थोड़ा भी घबराया नहीं, उसने गुप्त रूप से हाथी के कान में यों कहा–"बाबा, राजा ने ऐसी एक योजना बनाई है जिससे आप पहाड़ी चोटी पर से नीचे गिरकर मर
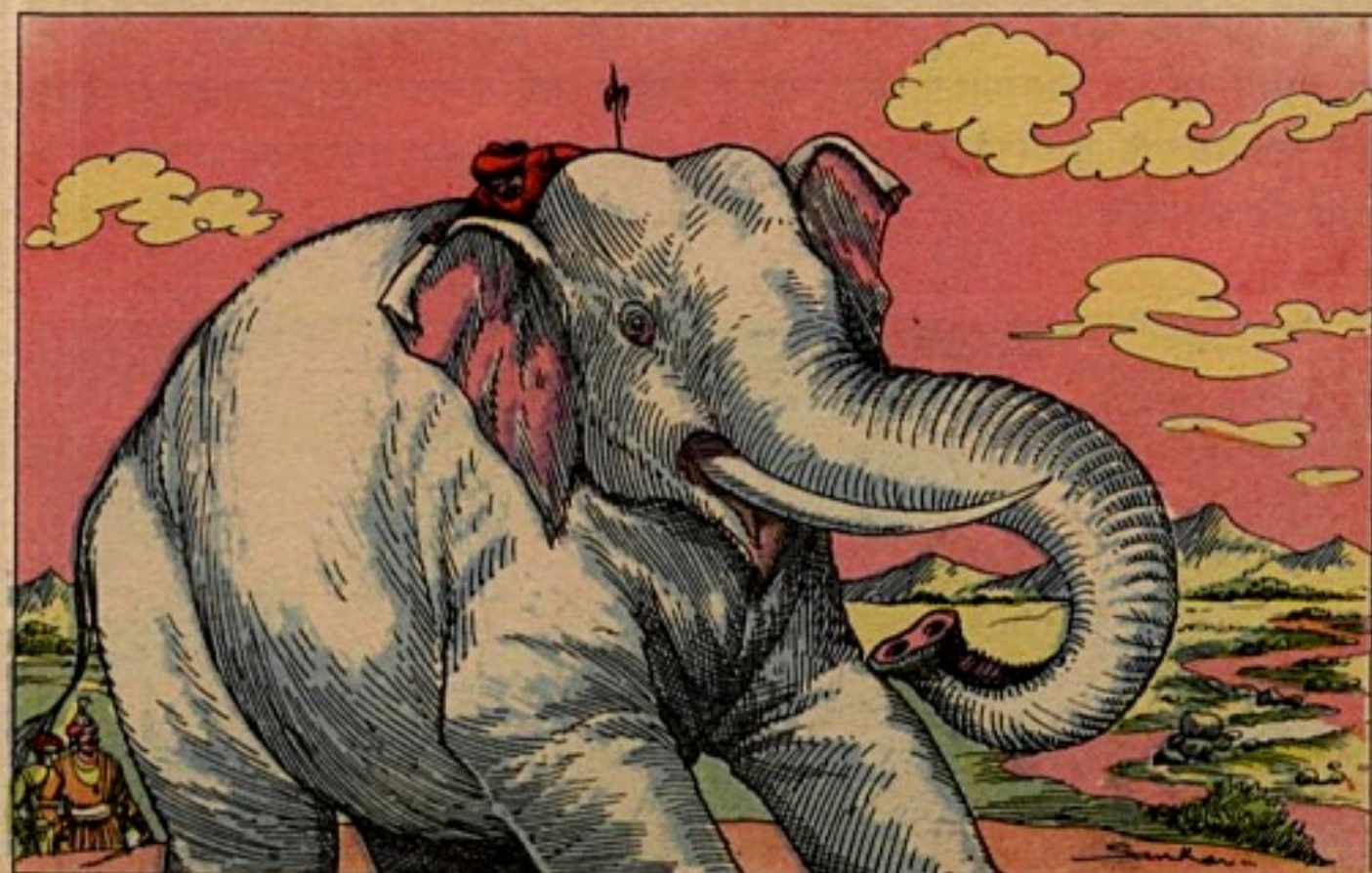
जाये! राजा तो आपके महत्व को नहीं जानते। यदि आप सचमुच शक्ति रखते हैं तो इस चोटी के छोर से आगे बढ़कर हवा में पैदल चलिये।"

अनोखी महिमा और अद्भुत शक्तियों वाला वह हाथी पहाड़ी शिखर पर आगे बढ़ा और हवा में तैरता गया। इस पर राजा ने महावत से कहा–"हे राजन, यह हाथी साधारण नहीं है, देवता-अंश वाला है। इसका महत्व न जानने वाले आप जैसे व्यक्ति के लिए यह पट्ट हाथी बनने योग्य नहीं है। सही मूल्यांकन न कर सकने वाले मूर्ख सिर्फ़ हाथी ही नहीं, बल्कि अन्य प्रकार की अमूल्य वस्तुओं को भी खो बैठते हैं। मूर्ख व्यक्ति सबके सामने अपनी मूर्खता को स्वयं प्रकट करता है।"

इसके बाद हाथी हवा में उड़ते जाकर काशी राज्य में पहुँचा, और वहाँ के राजा के उद्यान वन पर आसमान में खड़ा रहा। इसे देख नगर के नागरिक कोलाहल करते वहाँ पर आ पहुँचे।

यह खबर राजा को मिली। राजा ने उद्यान में पहुँच कर हाथ जोड़कर कहा–"हे गजराज, तुम्हारे आगमन से मेरा राज्य पवित्र हो गया है। तुमसे प्रार्थना करता हूँ कि धरती पर उतर आओ।"

राजा के मुँह से ये बातें सुनकर हाथी के रूप में स्थित बोधिसत्व नीचे उतर आये। महावत ने सारा वृत्तांत सुनाया। इस पर राजा और प्रजा परमानंदित हुई।

इसके बाद राजा ने हाथी को खूब सजवा कर एक सुंदर शाला में रखा, अपने राज्य के तीन भाग करके एक भाग को हाथी के रूप में स्थित बोधिसत्व के पालन-पोषण के लिए, और दूसरा हिस्सा महावत को दे दिया। शेष हिस्से को अपने अधीन में रख लिया।

जिस वक़्त बोधिसत्व काशी राज्य में पहुँचा, तब से लेकर काशी राज्य का वैभव बढ़ता गया। इस प्रकार उनका यश चारों तरफ़ फैल गया।

गुणाढ्च

आन्ध्र राज्य में स्थित प्रतिष्ठानपुर कई शताब्दियों के पहले शातवाहन राजाओं का राजधानी नगर था। राज दरबार के पंडितों में गुणाढ्य और शर्ववर्मा भी थे। एक बार शर्ववर्मा ने वार्तालाप के संदर्भ में छे महीने के अन्दर राजा को संस्कृत सिखाने की बात कही।

इस पर उन दोनों पंडितों के बीच वाद-विवाद हुआ, आख़िर दाँव लगाया कि अगर राजा छे महीनों में संस्कृत सीख सके तो गुणाढ्य आइंदा संस्कृत भाषा में काव्य-रचना करना बंद करेगा, मगर राजा ने बड़ी लगन के साथ दिन-रात अध्ययन करके विजय प्राप्त की, इस पर उस दाँव में गुणाढ्य हार गया।

इसके बाद गुणाढ्य ने उस नगर को छोड़ देशाटन करना शुरू किया। उसने कन्याकुमारी से हिमालय तक की यात्रा करके पंडित और देहातियों से भी कई कथाओं का संग्रह किया। उन सारी कहानियों को गुणाढ्य ने पैशाचिक भाषा में लिपिबद्ध किया ।

कई साल बाद गुणाढ्य प्रतिष्ठानपुर को लौट आया। पंडित और मित्रों ने उसका भारी स्वागत किया। उसने 'बृहत्कथा' नामक एक बड़ा ग्रंथ रचा। दुनिया भर में यही सबसे पहला कथा-संग्रह है।

इसके बाद गुणाढ्य अपनी बृहत्कथा को राजा को सुनाने लगा, मगर राजा किसी विचार में डूबे रहकर मंत्रियों के साथ मंत्रणा करने लगा। राजा का यह व्यवहार गुणाढ्य को अपमान-जनक मालूम हुआ।
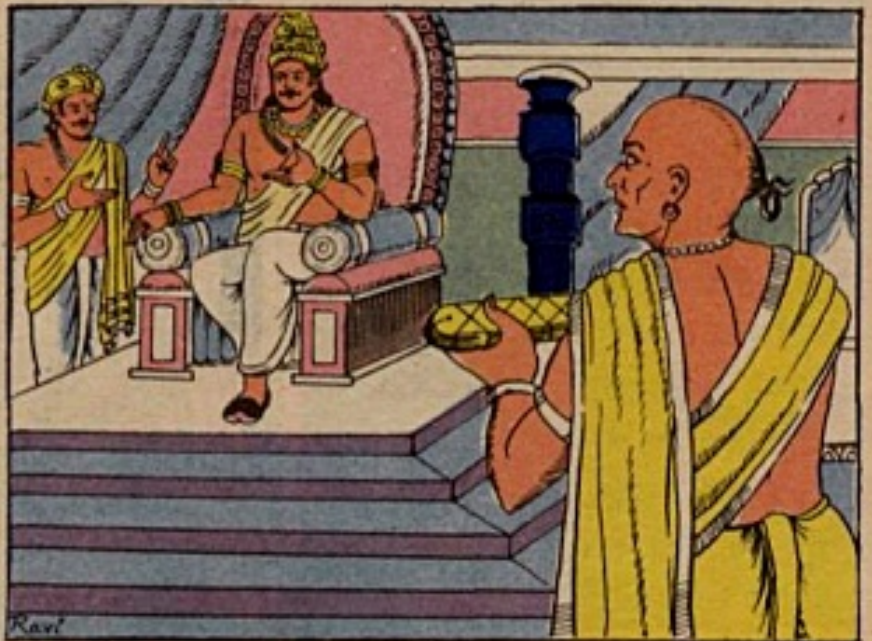
इस पर वह अपने ताड़-पत्र वाले उस ग्रंथ को लपेटकर राज दरबार से चला गया। राजा ने इस पर कोई ध्यान न दिया। राज दरबारियों ने भी गुणाढ्य को रोकने का प्रयत्न नहीं किया।

गुणाढ्य की व्यथा की कोई सीमा न रही, वह नगर के समीप के एक पहाड़ पर गया, आग सुलगा कर एक-एक ताड़ पत्र को आग में डालता गया। इस प्रकार उसकी कड़ी मेहनत और उत्कृष्ट रचना भम्म होने लगी।

कहा जाता है कि गुणाढ्य की इस करनी पर उस समय वहाँ पर पहुँचे हुए पशु और पक्षी आँसू बहाने लगे। वृक्षों ने दुख के बोझ से अपने सिर झुकाये। मगर गुणाढ्य ने इनकी परवाह नहीं की। वह बराबर अपनी कृति को अग्नि की आहुति करता ही गया।

उस वक्त उस रास्ते से गुजरने वाले एक राज कर्मचारी ने गुणाढ्य को देखा। उसने दौड़ते जाकर राजा को गुणाढ्य की इस करनी का परिचय दिया। राजा अपनी भूल को समझ कर बहुत दुखी हुआ।

उसी वक्त राजा एक घोड़े पर सवार हो तेज गति के साथ गुणाढ्य से मिलने चल पड़ा। मंत्री तथा अन्य राज कर्मचारियों ने राजा का अनुसरण किया।

राजा ने गुणाढ्य के समीप पहुँच कर निवेदन किया—"आप तो महान पंडित हैं, आप मुझे क्षमा करके अपनी अमूल्य कृति को अग्नि की आहुति के होते बचाइये।" मगर तब तक ग्रंथ का पांचवां हिस्सा मात्र बचा था। राजा ने उस अंश को ले लिया।

इसके बाद गुणाढ्य को कई बार राज-सम्मान प्राप्त हुए, मगर उनकी संपूर्ण कृति प्राप्त न हो पाई। पैशाची भाषा भी लुप्त होती गई, लेकिन अग्नि की आहुति के होने से जो बृहत्कथा बची थी, उसे कुछ शताब्दियों के बाद सोमदेव नामक पंडित ने 'कथा सरित्सागर' नाम से संस्कृत भाषा में अनुवाद किया।

उधार की अक़्ल

सूर्यपुर का जमीन्दार एक दिन अपनी कचहरी में बैठा हुआ था, तब पड़ोसी गाँव के रामप्रसाद नामक एक किसान ने प्रवेश करके पूछा–"महानुभाव, मेरी कन्या की शादी के लिए कृपया तीन हज़ार रुपये उधार दीजिए !"

"ओह, तुम्हारे गाँव में तीन हज़ार रुपये उधार पाने की ताक़त तुम नहीं रखते ?" जमींदार ने पूछा ।

"अव्वल दर्जे के कंजूस से भी उधार पाने की ताक़त मैं रखता हूँ । लेकिन आप की उदारता की बात सुनकर मैं इतनी दूर चला आया हूँ !" रामप्रसाद ने जवाब दिया ।

"सुनो, अगर तुम मेरे गाँव के सोमगुप्त से उधार ला सकोगे तो मैं तुम्हें पांच हजार रुपये की क़ीमत वाला सोने का यह कंगन दे सकता हूँ ।" जमीन्दार ने चुनौती दी ।

"आप कृपया वह कंगन मुझे दे दीजिए ! मैं सोमगुप्त से उधार लेकर वहाँ से सीधे अपने गाँव चला जाऊँगा ! अगर आप मुझ पर यक़ीन नहीं करते तो मेरे साथ अपने अनुचरों को भेज दीजिए ।" रामप्रसाद ने कहा ।

जमीन्दार थोड़ी देर तक सोचता रहा, फिर रामप्रसाद के हाथ कंगन देकर उसके पीछे अपने चार अनुचरों को भेजा । रामप्रसाद ने सोमगुप्त के यहाँ वह कंगन गिरवी रखकर तीन हज़ार उधार में लिया, फिर अपने साथ आये हुए लोगों से कहा–"तुम लोग यह ख़बर जमीन्दार को दे दो ।" तब अपने रास्ते आप चला गया ।

ब्याज का व्यापार

विजयनगर में विक्रमगुप्त नामक एक महाजन रहा करता था। एक दिन उसने अपने पुत्र ज्ञानगुप्त को बुलाकर समझाया—"मैं बूढ़ा हो चुका हूँ! एक बार तीर्थाटन करना चाहता हूँ। आज से तुमको स्वयं इस व्यापार को संभालना होगा!"

ज्ञानगुप्त ने अपने पिता की बात मान ली। इस पर विक्रमगुप्त ने अपनी यात्रा की सारी तैयारियाँ कीं और यात्रा पर जाने के पहले अपने पुत्र को व्यापार के कुछ रहस्य बताकर समझाया—"बेटा, अनुभव के आधार पर तुम व्यापार के कुछ रहस्य खुद समझ लोगे। तुम्हें अगर कभी कोई संदेह होगा तो पुराने बही-खातों को एक बार ध्यान से देखा करो।"

अपने पिता के तीर्थाटन पर जाने के बाद ज्ञानगुप्त बड़ी सावधानी के साथ व्यापार के मामले देखने लगा। एक दिन नगर का एक छोटा सा फलों का व्यापारी ज्ञानगुप्त के पास आया और बोला—"महाशय, मुझे चार हज़ार रुपयों की सख्त जरूरत आ पड़ी है। आप इकरार नामा लिखवाकर मुझे कर्ज़ दीजियेगा।"

"आप कौन-सा व्यापार करते हैं?" ज्ञानगुप्त ने पूछा।

"फलों का व्यापार करता हूँ।" व्यापारी ने जवाब दिया।

"खरीद-फरोख्त में रोज आप कितना धन कमाते हैं?" ज्ञानगुप्त ने पूछा।

"पचास रुपये के लगभग! अभी माल आनेवाला है। मुझे उसे छुड़ाना है। कृपया जल्दी रुपये दीजियेगा।" यों कह कर व्यापारी जल्दी मचाने लगा।

इस पर ज्ञान गुप्त के मन में एक संदेह हुआ। यह व्यापारी रोज पचास रुपयों के हिसाब से एक महीने में डेढ़ हज़ार रुपये

मोहन लाल गौतम

का व्यापार करता है! ऐसी हालत में चार हज़ार रुपये कर्ज़ कैसे चुका सकता है?

यों विचार कर ज्ञानगुप्त ने कहा–"मैं आप को चार हज़ार रुपये नहीं दे सकता। एक हज़ार रुपये दे सकता हूँ। आपको कोई आपत्ति न हो तो ले जा सकते हैं।"

यह जवाब सुनकर फलों का व्यापारी आश्चर्य में आ गया और बोला–"महाशय, यह आप क्या कहते हैं? आपके पिता ने तो मुझे एक बार छे हज़ार रुपये तक कर्ज दिया था!"

इतने में एक जौहरी ने प्रवेश करके ज्ञानगुप्त को एड़ी से चोटी तक देखकर दर्प से कहा–"सुनो भाई, मुझे दस हज़ार रुपये चाहिए!"

उस जौहरी की तो नगर के प्रमुख मार्ग पर एक लाख रुपये की क़ीमत की दूकान है, यह बात ज्ञानगुप्त अच्छी तरह से जानता था। इसलिए उसने चुपचाप जौहरी को दस हज़ार रुपये उधार देकर भेज दिया। पर फलों के व्यापारी के गिड़गिड़ाने पर भी एक हज़ार रुपयों से ज़्यादा न दिया।

इसके बाद हर महीने फलों का व्यापारी कुछ न कुछ रक़म लाकर अपने हिसाब में जमा करता गया। मगर जौहरी ने चार महीने बीतने पर भी एक भी रुपया जमा न किया, न उसने अपना चेहरा दिखाया। रुपये की मांग करने पर उसने सही समाधान तक दिये बिना ज्ञानगुप्त के

नौकर को वापस भेज दिया। इस बीच फलों के व्यापारी ने अपने कर्ज में से आधे रुपये जमा कर दिये।

इस बीच विक्रमगुप्त तीर्थाटन समाप्त करके घर लौटा। उसने एक दिन बही-खाता उलटकर देखा। उसमें जौहरी तथा फलों के व्यापारी के खाते दिखाई पड़े।

इस पर विक्रमगुप्त ने अपने पुत्र ज्ञानगुप्त को बुलाकर पूछा–"बेटा, तुमने जौहरी को दस हज़ार रुपये कर्ज क्यों दिया?"

ज्ञानगुप्त ने अपनी भूल को स्वीकार करने वाले के जैसे चेहरा बनाकर कहा– "पिताजी, मैंने यह सोचकर जौहरी को इतनी बड़ी रक़म दी कि वह धनवान है और आसानी से कर्ज चुका सकता है। पर उसने आज तक एक भी रुपया कर्ज नहीं चुकाया है।"

"मैंने तीर्थाटन पर जाते वक़्त तुमको व्यापार के कुछ रहस्य बताये थे। तुमको महाजनी के व्यापार में एक खास बात को बताना भूल गया था। जब हम कर्ज देते हैं तो कर्ज लेने वाले की आर्थिक स्थित से बढ़कर यह बात देखनी होती है कि कर्ज लेने वाले के मन में कर्ज चुकाने की उत्सुकता है या नहीं? ऐसे व्यक्तियों को हम अगर उसकी आर्थिक स्थिति से भी बढ़कर कर्ज दे तो भी वे लोग ईमानदारी के साथ हमारा कर्ज चुकायेंगे। जौहरी के पास धन तो है, मगर उसके भीतर ईमानदारी का गुण नहीं है।" विक्रमगुप्त ने समझाया।

इसके बाद कुछ ही दिनों में ज्ञानगुप्त के विवाह के लिए एक रिश्ता आया। विक्रमगुप्त ने जौहरी की दूकान में जाकर अपनी बहू के वास्ते गहने खरीदे। उस वक़्त उसने व्यापारी को जो कर्ज दिया था, दस हज़ार रुपये, उसके साथ उसके ब्याज को भी मिलाकर उसके बराबर गहने लिये और अपने खाते में जमा किया।

इस अनुभव के आधार पर ज्ञानगुप्त बड़ी कुशलतापूर्वक अपना व्यापार चलाने लगा।
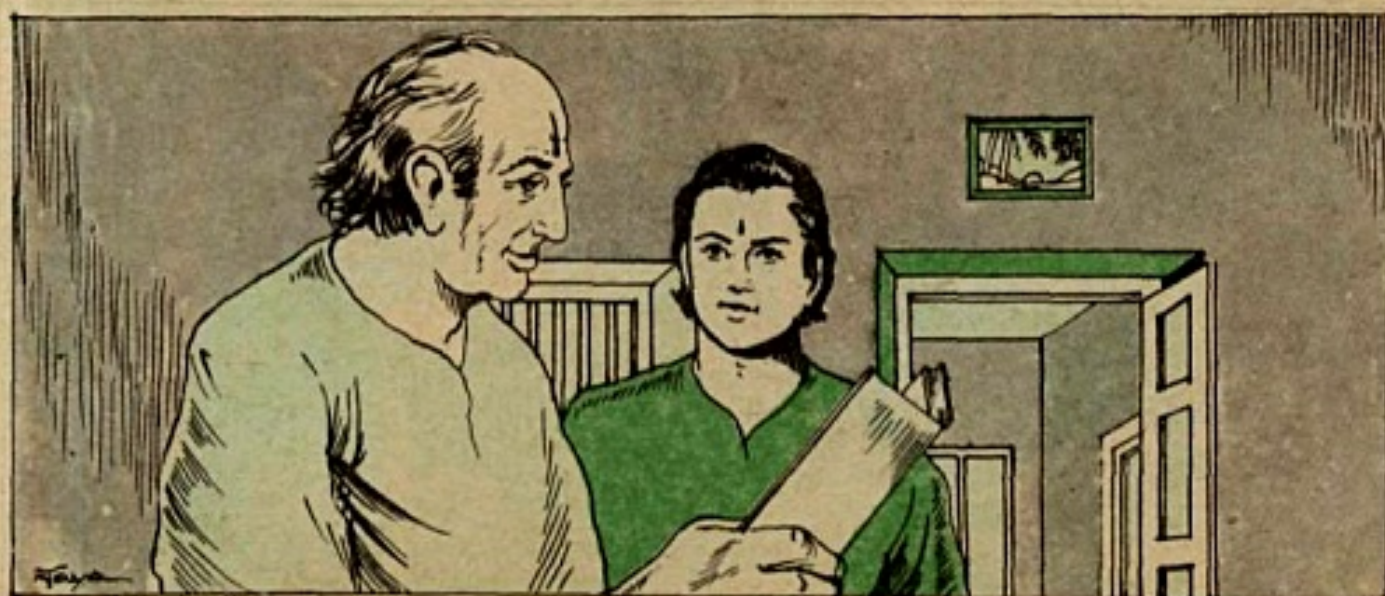
सूप और छलना

दानापुर राजा के दरबार में जब कभी कोई जगह खाली हो जाती हो तो उस जगह पर नये लोगों को नियुक्त करते समय राजा अपने गुरु के द्वारा उनकी परीक्षा करवा देते थे। एक बार राज दरबार में एक ऊँचे अधिकारी का पद खाली हो गया।

उस पद को पाने के वास्ते रामशास्त्री तथा गोपालशास्त्री नामक दो व्यक्तियों ने आवेदन पत्र भेजे। उन दोनों की परीक्षा लेने के लिए राजा ने उन्हें अपने गुरु के पास भेजा। गुरु उनकी परीक्षा लेकर उनके हाथ कोई चीज देता और उन्हें फिर से राजा के पास भेज देता। उन वस्तुओं के आधार पर राजा उन व्यक्तियों के स्वभाव को समझ लेता।

इस बार गुरु ने रामशास्त्री के हाथ एक सूप तथा गोपाल शास्त्री के हाथ एक छलनी देकर उन्हें राजा के पास भेज दिया। राजा उन चीज़ों का अर्थ समझ न पाया। इसलिए उन्हें अपने दरबारी पुरोहित के पास भेजा। पुरोहित बड़ी देर तक सोचता रहा, मगर उसे भी उन चीज़ों का मतलब समझ में न आया। इसी बात पर विचार करते हुए जब पुरोहित अपने घर पहुँचा, तब उसने देखा कि उसकी पत्नी कूटे हुए धान को सूप से ओसा रही थी और आटे को छलनी से छान रही थी।

दूसरे दिन पुरोहित ने दरबार में पहुँचकर राजा से निवेदन किया–"महाराज, गुरुजी का उद्देश्य यह है–रामशास्त्री सूप की तरह उपयोगी चीज़ को रखकर अनुपयोगी वस्तु को फेंक देनेवाला विवेकशील व्यक्ति है, पर गोपालशास्त्री छलनी के जैसे उपयोगी वस्तु को छोड़कर अनुपयोगी वस्तु को रखनेवाला मंद बुद्धि है।"

फिर क्या था, राजा ने रामशास्त्री को उस खाली जगह पर नियुक्त किया।

भूत का भय

कालिंदी नदी के किनारे पुंजिका नामक गाँव में प्रज्ञावान नामक एक ब्राह्मण रहा करता था। उसका नाम तो बड़ा था, लेकिन वह एक नालायक़ था। उसके साथ सुलोचना नामक एक सुयोग्य और सुंदर कन्या का विवाह करने का निश्चय हुआ। सुलोचना के माता-पिता का यह विचार था कि प्रज्ञावान तो जान-पहचान का है और उसकी कन्या भी उन्हीं के गाँव में रह जायेगी।

मुहूर्त का समय निकट आया था। पर सुलोचना को वह रिश्ता बिलकुल पसंद न था। लेकिन उसकी शिकायत सुनने को कोई तैयार न था। इसलिए उसने सोच-समझ कर आखिर आत्म हत्या करने का निश्चय किया। शादी के दिन सवेरे वह घड़ा लेकर कालिंदी नदी के किनारे पहुँची। नदी के किनारे घड़ा रखकर वह पानी में कूदने को हुई, तब पीछे से अचानक कोई आदमी दौड़ा-दौड़ा आया और उसने उसका हाथ पकड़ कर पीछे की ओर खींच लिया।

सुलोचना को नदी में कूदने से रोकने वाला वह युवक वित्तकर्म था। वह मथुरा नगर में व्यापार किया करता था। शादी करने के ख्याल से उसने कई कन्याओं को देखा, लेकिन उसे एक भी कन्या पसंद न आई, इस कारण दूसरे गाँवों में कन्याओं को देखने के विचार से वह नदी के किनारे घोड़े पर सवार हो चला जा रहा था। उसने दूर से ही सुलोचना को नदी की ओर बढ़ते देखा। घोड़े से उतर कर उसके समीप पहुँचा। वह बार-बार पीछे देखते नदी की ओर बढ़ रही थी। इसलिए उस युवक को संदेह हुआ कि वह युवती आत्म हत्या करना चाहती है, तब उसने ऐन मौक़े

पर पहुँच कर सुलोचना को नदी में गिरने से बचाया।

वित्तकर्म ने आश्चर्य में आकर पूछा– "तुम तो दुलहिन की पोशाकें पहनकर यह क्या करने जा रही हो?"

सुलोचना ने सारी बातें सच-सच बताईं और बोली–"ऐसे नालायक़ युवक के साथ शादी करने से मर जाना कहीं अच्छा है! आप ने सही वक़्त पर पहुँचकर मेरे प्रयत्न में विघ्न डाला।" यों कहते वह रो पड़ी।

"मैंने जो कुछ किया, अच्छा ही किया। मैं भी एक सुंदर कन्या की खोज में भटक रहा हूँ, कई कन्याओं को देखा भी, मगर तुम जैसी सुंदर कन्या मुझे आज तक कहीं दिखाई नहीं दी। अगर तुम्हें कोई आपत्ति न हो तो मैं तुम्हारे साथ शादी करने को तैयार हूँ।" वित्तकर्म ने अपने मन की बात बताई।

"जिस वक़्त मैंने आत्महत्या करने का निश्चय किया, तभी मैं अपने परिवार के सभी लोगों से दूर हो गई। उन लोगों ने मेरा उपकार ही क्या किया है! जिससे मैं उनकी चिंता करूँ? आप ने सही वक़्त पहुँच कर मुझे मरने से रोका, इसलिए आपके साथ में प्रसन्नतापूर्वक विवाह करन को तैयार हूँ।" सुलोचना ने स्पष्ट शब्दों में जवाब दिया।

वित्तकर्म सुलोचना को अपने घोड़े पर बिठाकर अपने घर ले आया।

उन दोनों के चले जाने के बाद गाँव के कुछ लोग नदी के किनारे आये। किनारे पर घड़े को देख उन लोगों ने सोचा कि कोई युवती नदी में कूदकर मर गई है। यह खबर थोड़ी ही देर में आग की तरह सारे गाँव में फैल गई। एक तो सुलोचना कहीं दिखाई न दी और साथ ही खाली घड़ा नदी के किनारे पर पाया गया। इस कारण सबने यह निश्चय कर लिया कि सुलोचना ने नदी में कूदकर आत्महत्या कर ली है। शादी में आये हुए सभी रिश्तेदार अपने अपने ढंग से सुलोचना की

मृत्यु के बारे में व्याख्या करने लगे। थोड़े दिन बाद प्रज्ञावान की शादी राधा नामक एक कन्या के साथ हो गई। वह ससुराल में गई। एक साल बाद गर्भवती भी हो गई। गर्भवतियों की तबीयत जब-तब बिगड़ा करती है। राधा को वक़्त-बेवक़्त कै होने लगी। इस पर वह डरने लगी। तिस पर अड़ोस-पड़ोस की महिलाएँ आकर राधा को डराने लगीं—"पगली, तुम गर्भवती हो, कालिंदी के पनघट पर क्यों गई? सुलोचना वहाँ पर भूत बनकर घूम रही है। शादी के वक़्त वह जबर्दस्ती की मौत मरी है। तुमने उसके होनेवाले पति के साथ शादी की, इसलिए वह तुम पर सख़्त नाराज़ हो गई और तुम्हारे भीतर प्रवेश करके तुमको सता रही है।"

प्रज्ञावान ने यह सोचकर मंत्र-तंत्र, जादू-टोना, व तावीज बनवाये कि कहीं राधा के साथ गर्भ में रहनेवाले शिशु को भी कोई खतरा पैदा हो जाय। उसने ज्योतिषियों से सलाह भी ली। पर सभी लोगों ने यही बताया कि राधा पर भूत सवार है। इस पर प्रज्ञावान ने आस-पास के मांत्रिकों तथा ओझाओं को बुलवा भेजा, मंत्र व तावीज बंधवाये, एक के बाद एक चार मांत्रिकों ने भूत को दफनाया। धीरे-धीरे राधा की तबीयत सुधरने लगी, तब लोगों ने सोचा कि उसे भूत का पिंड छूट गया है।

मगर थोड़े दिन बाद राधा ने एक शिशु को जन्म दिया और वह शिशु कुछ ही घड़ियों में मर गया। तब फिर से सभी लोगों ने सोचा कि यह भूत की करनी है। एक ने कहा—"मंत्र पढ़ने से फ़ायदा ही क्या है! प्रज्ञावान तुम तीर्थाटन क्यों नहीं करते?"

कुछ लोगों ने इसका जोरदार शब्दों में समर्थन करते हुए सलाह दी कि तीर्थाटन करने पर एक आदमी को भूत ने सचमुच ही छोड़ दिया है।

इस पर प्रज्ञावान अपनी पत्नी राधा को साथ ले तीर्थाटन पर चल पड़ा। वे दो-तीन दिन की यात्रा के बाद मथुरा पहुँचे और वहाँ एक सराय में टिक गये। उस दिन रात को चोरों ने उनका सब कुछ लूट लिया।

प्रज्ञावान और राधा खाली हाथ तीर्थाटन पर जा नहीं सकते थे और न वे पीछे लौट सकते थे। उनकी यह बुरी हालत देख सराय में टिके अन्य मुसाफ़िरों ने उन्हें समझाया—"तुम लोग चिंता न करो। इस शहर में तुम्हारे ही प्रदेश का एक व्यापारी है, जो अपने दान-पुण्य के लिए इस सारे शहर में बहुत ही मशहूर है। उनके पास जाकर अपना हाल सुनाओ, तो वे जरूर तुम्हारी यात्रा का सारा इंतजाम करेंगे।"

व्यापारी के घर का पता लगाकर प्रज्ञावान अपनी पत्नी के साथ वहाँ पहुँचा।

राधा का पति जब व्यापारी से बातचीत कर रहा था, तब राधा सीधे व्यापारी की पत्नी के पास पहुँची और उसने अपना सारा दुखड़ा कह सुनाया कि किस तरह सुलोचना भूत बनकर उसे सता रही है और कैसे उस भूत का पिंड छुड़ाने के लिए वे दोनों तीर्थाटन पर चल पड़े, सराय में चोरों ने कैसे उनका सारा सामान लूट लिया है। ये सारी बातें विस्तारपूर्वक सुलोचना को सुनाईं।

यह सारा वृत्तांत सुनने के बाद व्यापारी की पत्नी सुलोचना ने अपने बदन के सारे गहने उतार दिये, एक साधारण साड़ी पहनकर अपने पति के साथ बात-चीत करने वाले प्रज्ञावान को बुला लाने का अपने नौकर को आदेश दिया। प्रज्ञावान तो वहाँ पर पहुँचा, लेकिन उसने व्यापारी की पत्नी की ओर आँख उठाकर न देखा। व्यापारी की पत्नी सुलोचना ने स्वयं प्रज्ञावान से पूछा—"महाशय, आप ने कभी मुझे देखा है?"

प्रज्ञावान ने व्यापारी की पत्नी की ओर देखा, सुलोचना को पहचान लिया, मगर वह अवाक हो मूर्ति के समान चुपचाप खड़ा ही रह गया।

इस पर सुलोचना ने राधा की ओर मुड़कर समझाया—"देखती हो न बहन, तुम लोग मुझे भूत बन जाने की भ्रांति में पड़कर यों परेशान हो रहे हो! अब भी सही, तुम लोग समझ लो कि भूत के माने केवल हम लोगों का भ्रम है। अब तुम दोनों घर लौटकर आराम से अपने दिन बिताओ।" यों समझाकर सुलोचना ने अपनी सारी कहानी सुनाई।

सुलोचना के मुँह से सारा वृत्तांत सुन कर राधा और प्रज्ञावान आश्चर्य में आ गये। उन्हें अपनी नासमझी और मूर्खता पर हंसी आई और वे लज्जित भी हुए।

इसके बाद प्रज्ञावान और राधा दो दिन तक सुलोचना के घर पर मेहमान बनकर रहे, वापसी यात्रा के लिए उससे रुपये लेकर अपने गाँव लौट आये।

लोभ का फल

एक दिन शाम के वक़्त जानकी अकेली घर पर थी, उस घर के किवाड़ खुले थे। उधर से भागने वाला एक चोर अचानक उस घर में घुस आया, कुंडी चढ़ा कर जानकी की ओर बढ़ा। इस पर चोर को देख जानकी चिल्लाने को हुई।

चोर ने गरज कर कहा–"तुम चिल्लाओगी तो मार डालूंगा। मैं तुम्हारे घर में डाका डालने नहीं आया हूँ। रास्ते में एक आदमी बनारसी साड़ी लेकर जा रहा था, मैं उसे हड़प कर भागने को हुआ, इस पर वह मेरा पीछा करने लगा। मैं उसकी आँख बचाकर यों भाग आया।"

बनारसी साड़ी का नाम सुनते ही जानकी उछल पड़ी। उसने पूछा–"वह साड़ी दिखाओ तो सही।"

चोर ने साड़ी निकाल कर जानकी को दिखाया, फिर उसे थैली में रख लिया।

"मैं कई महीनों से अपने पति से कह रही हूँ कि ऐसी साड़ी खरीदकर ला दो, मगर वे लाये नहीं! आखिर मैंने कल उनसे झगड़ा भी किया था। वे खीझकर बोले–"बनारसी साड़ी खरीदना क्या मामूली बात है! इतने रुपये मैं कहाँ से लाऊँगा? सुनो, तुमने यह साड़ी रुपये देकर खरीदी नहीं, मेरे हाथ बेच दो। मैं दो सौ रुपये देती हूँ। यह साड़ी मुझे दे जाओ। कोई तुम्हारा पीछा करेगा तो तुम्हें कोई डर न होगा।" जानकी ने कहा।

"अच्छी बात है, रुपये ले आओ।" चोर ने कहा। इस बीच किवाड़ पर दस्तक देने की आवाज़ हुई। चोर झट अटारी पर चढ़कर छिप गया।

जानकी ने जाकर किवाड़ खोला। बाहर सिपाही खड़े थे। उन लोगों ने पूछा–"माई, एक चोर बाजार में किसी के

मनोहर वर्मा

हाथ से बनारसी साड़ी खींचकर भाग गया है। क्या वह इस ओर तो नहीं आया?"

जानकी ने अपने मन में सोचा–'इन सिपाहियों के हाथ चोर को पकड़ा देने पर उसका फ़ायदा ही क्या होनेवाला है! एक हज़ार से भी ज़्यादा क़ीमत वाली साड़ी चोर उसके हाथ दो सौ रुपयों में बेच रहा है!' यों सोचकर जानकी ने जवाब दिया– "इधर कोई चोर नहीं आया है।"

इसके बाद सिपाही चले गये। तब जानकी घर के अंदर चली गई। चोर को अटारी पर से उतरने को कहा। फिर उसने कई दिनों से बड़ी मुश्किल से जो दो सौ रुपये बचाये थे, चोर के हाथ देकर साड़ी देने को कहा। चोर ने दो सौ रुपये थैली में रख लिये, साड़ी जानकी के हाथ नहीं दी, उसे धक्का देकर भाग गया।

अचानक यह जो घटना घट गई, इस पर जानकी एकदम विस्मय में आ गई, उसने सोचा कि चोरी के माल के लोभ में पड़ने और उसे बचाने का उचित दण्ड उसे मिल गया है।

इस बीच जानकी का पति भोला प्रसाद घर लौट आया और बोला–"अरी, सुनो तो! तुम भी कैसी बदक़िस्मत हो! तुम कई महीनों से बनारसी साड़ी खरीद लाने को मुझे तंग करती थी। इस बात को लेकर हम दोनों ने झगड़ा भी किया था। आज मैंने तुम्हारी यह इच्छा पूरा करने के ख़्याल से एक दोस्त से एक हज़ार रुपये कर्ज़ लिया, बनारसी साड़ी खरीद कर दूकान से बाहर निकला ही था कि कोई बदमाश चोर उसे खींचकर भागने लगा। मैंने उसका पीछा किया, लेकिन वह मेरी आँख बचाकर भाग गया। मैंने उसी वक़्त जाकर सिपाहियों को सूचना दी। अब चोर के पकड़े जाने की कोई उम्मीद नहीं है।"

अपने पति के मुँह से ये बातें सुनने पर जानकी को असली बात का पता लगा। लेकिन अब क्या कर सकती थी? चोर तो हाथ से निकल गया था।

विघ्नेश्वर

एक दिन नारद मुनि कैलास की ओर जा रहे थे। उस वक़्त कंटकमुखी नामक एक यक्षिणी मज़ाक़ करते बोली–"नारद, मेरे साथ विवाह करो। हे ब्रह्मपुत्र! ब्रह्मा के बंधनों से मुक्त हो जाओ।"

इसके जवाब में नारद बोले–"मैं कलहभोज हूँ! कलह पैदा करने वाली मुझे मिल जाय, तब न विवाह करूँ?"

"मैं तुमसे भी ज्यादा झगड़ालू हूँ।" यक्षिणी ने कहा।

उस वक़्त विघ्नेश्वर और कुमारस्वामी हाथों में हाथ डाले चले आ रहे थे। उन्हें देख नारद ने यक्षिणी से पूछा–"क्या तुम उन दोनों भाइयों के बीच झगड़ा पैदा कर सकती हो?"

"उफ़! यह कौन बड़ी बात है!" यों कहकर कंटकमुखी दल सरोवर में कूद पड़ी और सोने के कमल के रूप में बदलकर बोली–"मैं पार्वती और परमेश्वर के सुपुत्र के वास्ते खिल गई हूँ।"

इस पर दोनों भाई उस फूल को हाथ में लेकर झगड़ा करने लगे–"यह फूल मेरा है!" कुमारस्वामी ने कहा–"हे गणेश, तुम तो माँ के द्वारा बनाये गये खिलौने हो, मैल के ढेले हो!" इसके जवाब में विघ्नेश्वर बोले–"तुम तो गंदे शरवण सरोवर में पैदा हो गये हो न!"

कुमारस्वामी नाराज़ होकर अपनी मुट्ठी बांधकर गणेश पर प्रहार करने को हुए, तब विघ्नेश्वर ने अपनी सूंड़ से कुमारस्वामी की

कमर कसकर ऊपर उठाया। कुमारस्वामी ने विघ्नेश्वर की तोंद पर भाले का निशाना बनाया। इसे देख नारद मुनि दौड़े-दौड़े आये, बीच-बचाव करते बोले–"आप दोनों एक दाँव लगाइये!"

कुमारस्वामी ने सोचकर कहा–"जो व्यक्ति पहले इस विश्व की परिक्रमा करके लौटेगा, यह स्वर्ण कमल उसीका होगा।"

"वाह, यह शर्त बहुत बढ़िया है!" नारद बोले। फि क्या था, कुमारस्वामी उसी वक़्त मोर पर सवार हो विश्व की परिक्रमा करने चल पड़े। विघ्नेश्वर लुढ़क कर बैठ गये, तब नारद ने पूछा–"विघ्नेश्वर, आप क्या करने वाले हैं?"

विघ्नेश्वर ने निराश में आकर कहा–"महामुनि, जिसके भाग्य में जो बदा है, वही होगा। मैं इस तोंद के साथ छोटे चूहे पर सवार हो विश्व की प्रदक्षिणा कैसे कर सकता हूँ? मेरे छोटे भाई को ही स्वर्ण कमल लेने दीजिए।"

गणेश की बातें सुनकर नारद बोले–"विघ्नपति, मैं पार्वती और परमेश्वर के दर्शन करने आया था, फिर मिलूंगा।" यों कहकर नारद चले गये।

इसके बाद न मालूम विघ्नेश्वर के दिमाग में क्या सूझा, वे झट उठकर चले गये और एक टीले पर विराजमान पार्वती और परमेश्वर की तीन बार प्रदक्षिणा की, तब अपने छोटे भाई का इंतजार करते खड़े रह गये।

बड़ी देर बाद नाना यातनाएँ झेलकर कुमारस्वामी विश्व की प्रदक्षिणा समाप्त कर लौट आये और अपने मयूर वाहन से उतर पड़े। विघ्नेश्वर अपने छोटे भाई के साथ गले मिलकर बोले–"भैया, बेचारे तुम बड़ी मुसीबतें झेलकर विश्व की प्रदक्षिणा कर आये हो! स्वर्ण कमल तुम्हीं ले लो। वैसे जीत तो मेरी ही हुई, लेकिन मुझे उस कमल की जरूरत नहीं है!"

कुमारस्वामी ने अचरज में आकर पूछा–"यह कैसे?"

"तुम से पहले ही मैं तीन बार विश्व की प्रदक्षिणा कर चुका हूँ! चाहे तो तुम किसी से अपनी शंका का समाधान कर लो।" विघ्नेश्वर ने जवाब दिया।

इस पर तीन बार आकाशवाणी सुनाई दी–"विघ्नेश्वर ही विजयी हो गये हैं!"

कुमारस्वामी ने सच्ची बात ज़ान ली, विनायक के सामने साष्टांग प्रणाम करके बोले–"भैया! मैंने भारी तपस्या करके ब्रह्मज्ञान प्राप्त कर लिया है! आप तो कुशाग्र बुद्धि हैं। मैं आपके सामने किस खेत का मूली हूँ? आपके बाद ही मेरी गणना होती है। मैं तारकासुर के साथ युद्ध करने जा रहा हूँ! मुझे आशीर्वाद दीजिए!"

विघ्नेश्वर ने कुमारस्वामी के कंधे पकड़ कर उठाया और बोले–"मेरे छोटे भैया, तुम कभी इस बात को भूल से भी अपने मन में आने न दो कि मैं बड़ा हूँ और तुम छोटे हो! तुम किसी कारण को लेकर अवतरित हुए हो! तुम्हारे कहे अनुसार माताजी के द्वारा खेल-खेल में तैयार किया गया खिलौना हूँ मैं! तुम्हारे ही वास्ते पार्वती और शिवजी का विवाह संपन्न हुआ है! तुम उन दोनों के अनुराग का फल हो! तुम्हारी विजय पहले ही निश्चित है! तारकासुर ने तुम्हारे हाथों में देह-त्याग का वर मांग लिया है! तुम सुब्रह्मण्येश्वर हो! मेरे वास्ते सर्वत्र मंदिर होंगे, लेकिन तुम्हारे वास्ते कुछ प्रदेशों में बड़े-बड़े तीर्थ, बड़े-बड़े मंदिर और गोपुर होंगे। तुम एक प्रमुख देवता के रूप में पूजा पाओगे। जल्दी तारकासुर का वध कर डालो।"

इस पर कुमारस्वामी देवताओं के सेनापति के रूप में तारकासुर पर हमला करने चल पड़े। इसके बाद यक्षों का अधिपति कुबेर ने कंटकमुखी को शाप दिया–"अरी मायावी, पापिन! तुमने शिवजी के पुत्रों के बीच कलह पैदा किया है! इसलिए तुम गोखरू बन जाओ!" कंटकमुखी की बिनती पर कुबेर ने

बताया कि विघ्नेश्वर के अनुग्रह के द्वारा ही तुम्हारे शाप का विमोचन होगा। कंटकमुखी गोखरू के रूप में पृथ्वी पर अंकुरित हुई।

कुमारस्वामी ने देवताओं का सेनापति बनकर तारकासुर का संहार किया। इंद्र की पुत्री देवयाना के साथ कुमारस्वामी के विवाह की तैयारियाँ की गईं। मगर कुमारस्वामी ने यह कहकर उस विवाह को रोक दिया कि बड़े भाई के विवाह के बिना छोटा भाई कैसे शादी कर सकता है?

इस पर पार्वती ने विघ्नेश्वर को समझाया–"बेटा, छोटे भाई की शादी होनी है, तो तुम्हें विवाह करना होगा! यही न्याय संगत है!"

"माँ, ऐसे निरर्थक नियमों का तुम भी पालन करती हो? मुझ जैसे एकदंत को शादी की झंझट में क्यों खींचना चाहती हो?" यों विघ्नेश्वर ने प्रथम विघ्न के रूप में अपनी असम्मति प्रकट की।

इसके बाद विघ्नेश्वर अपने विवाह को रोकने के लिए कई विघ्न और बहाने बनाने लगे। एक बार पार्वती ने विघ्नेश्वर पर बहुत ज्यादा दबाव डाला। इस पर विघ्नेश्वर ने बाधा डाली–"माँ, छोटे भाई ने तपस्या की, पर मैंने नहीं की, मुझे भी तो तपस्या करनी है न?" यों कह कर विघ्नेश्वर तपस्या करने चल पड़े।

इन्द्र ने विघ्नेश्वर की तपस्या का भंग करने के लिए सारी अप्सराओं को भेजा, लेकिन अर्क नामक अप्सरा ने साफ़ इनकार किया। तब इन्द्र ने उसे शाप दिया–"तुम आक बनकर पृथ्वी पर उगो।"

विघ्नेश्वर ने अपनी तपस्या के लिए उचित स्थान का चुनाव किया। वहाँ पर गोखरू के झाड़ चारों तरफ़ फैले हुए थे। आक की झाड़ियों में कलियाँ खिलने की हालत में थीं। विघ्नेश्वर का तप चालू था। अप्सराओं ने वहाँ पर पहुँचकर अपना नृत्य शुरू किया। उनके पैरों में गोखरू चुभने लगे, उनकी देह भी गोखरू चुभने से दुखने लगी। तब वे अप्सराएँ

कराहते आर्तनाद करने लगीं। इस पर विघ्नेश्वर का ध्यान भंग हुआ। उन्होंने आँखें खोलकर देखा। उनके मन में गोखरू की झाड़ियों के प्रति दया आई। अप्सराएँ डर के मारे दौड़ते-गिरते, लंगड़ाते भाग गईं। गोखरू के रूप में पैदा हुई यक्षिणी कंटकमुखी बिनती करने लगी– "भगवन, मैं आप दोनों भाइयों के बीच झगड़ा पैदा करके कुबेर के शाप का शिकार हो इस हालत में पड़ी हुई हूँ। मुझ पर अनुग्रह कीजिए।"

वह भादों का महीना शुक्ला चौथ का दिन था। उसी दिन विनायक चौथी पड़ती थी। विघ्नेश्वर ने कंटकमुखी का शाप विमोचन करके कहा–"विनायक चौथी के दिन लोग तुम्हारे गोखरू के फलों को विकट विनोद के रूप में काम में लायेंगे। तुम अब जा सकती हो!"

इसके बाद यक्षिणी अलकापुरी में पहुँची। उस समय आक ने निवेदन किया–"स्वामी, मुझ पर भी अनुग्रह कीजिए! मैं इन्द्र की आज्ञा का तिरस्कार करके अछूत बनकर इस हालत में पड़ी हुई हूँ। मैं अर्क नामक अप्सरा हूँ! आपके प्रति मैं अपार श्रद्धा-भक्ति रखती हूँ।"

विघ्नेश्वर ने आक को समझाया–"इस सृष्टि के भीतर अछूत नामक कोई चीज़ नहीं है। तुम्हारी कलियों और फूलों को भी मैं प्रेमपूर्वक माला के रूप में धारण करूँगा। तुम द्वापर युग में कुब्जा बनकर

अभी तक मैंने शुरू नहीं की। मैं फिर से तपस्या करने जा रहा हूँ।" यों कहकर विघ्नेश्वर ने तपस्या के लिए दूसरा स्थान चुन लिया। वह प्रदेश सांपों की बांबियों से भरा था। उनके बीच बैठकर विघ्नेश्वर ने तपस्या शुरू की। बांबियों से सांप निकल आये, अपने फन फैलाकर फुत्कारते हुए विघ्नेश्वर का पहरा देने लगे। तब इंद्र ने मूषिकासुर के अनुचरों को उकसा कर समझाया–"हे राक्षसो, तुम्हारे मालिक मूषिकासुर को वाहन बनाये हुए विघ्नेश्वर तुम सब लोगों का संहार करने के लिए तपस्या कर रहे हैं! तुम लोग अभी जाकर इसका बदला ले लो।"

ये बातें सुनकर सारे राक्षसों ने विनायक पर हमला बोल दिया, तब पाताल से महा सर्प निकल आये और राक्षसों को सताने लगे। सर्पों के हमले से कई राक्षस मर गये और बचे हुए लोग अपनी मूर्खता की निंदा करते हुए इंद्र को गालियाँ सुनाते हुए भाग गये।

इसके बाद इन्द्र ने उत्साही देवता पुरुषों के साथ अप्सराओं को भेजते हुए आदेश दिया–"तुम लोग विघ्नेश्वर के भीतर प्रेम भाव जगा दो।" यों समझाकर वे भी खुद वज्रायुध धारण करके चल पड़े। देवता लोग अप्सराओं के साथ जोड़ियों

जन्म लोगी। कृष्ण तुम्हें स्वीकार करेंगे। तुम्हारे शाप का विमोचन हो गया है। अब तुम खुशी के साथ घर चली जाओ। इंद्र या और किसी के द्वारा भी तुम्हें कोई भय न होगा! तुम्हें कोई भी शाप छू न सकेगा! आक की जड़ें आयुर्वेद के औषधों के काम देंगी, आक के पात सूर्य के लिए प्रिय होंगे।"

इस पर अर्क अप्सरा के रूप में स्वर्ग में चली गई। विघ्नेश्वर कैलास में चले गये, तब पार्वती ने समझाया–"बेटा, तुम्हारी तपस्या तो समाप्त हो गई है न! अब तुम विवाह करो।" इसके जवाब में विघ्नेश्वर बोले–"तपस्या का समाप्त होना कैसे?
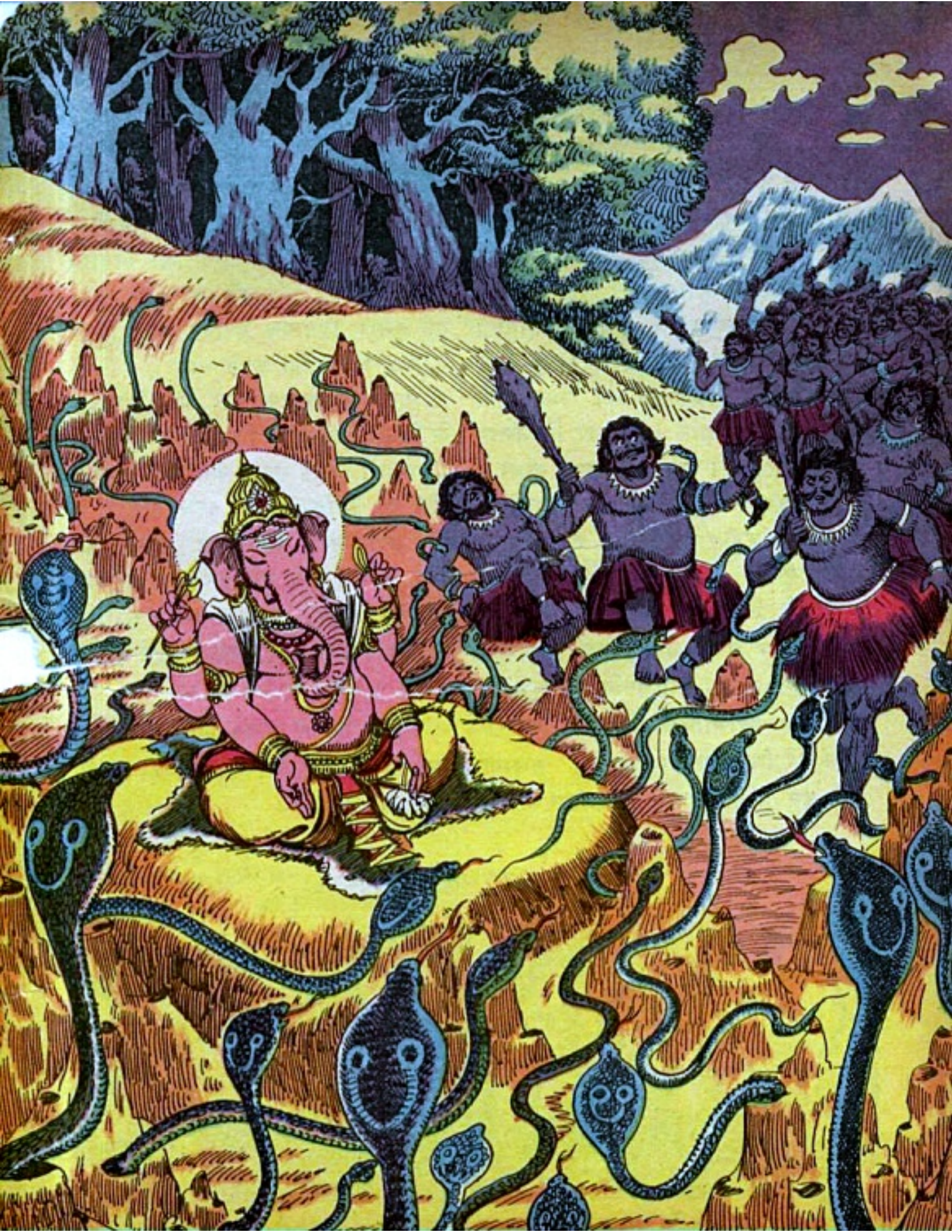
के रूप में कोलाहल करते, गीत गाते नाचने लगे। इसे देख नाग फुफ्कार करते उन्हें घेरकर डसने लगे। इन्द्र ने नागों पर अपने वज्रायुध का प्रहार करना चाहा, इस पर नाग रोष में आ गये। तब नाग लोक से सारे महा सर्प आ धमके और देवताओं को स्वर्ग तक भगा दिया। देवता और नागों के बीच एक युद्ध छिड़ गया। इन्द्र के वज्रायुध की भी परवाह किये बिना नागों ने स्वर्ग को घेर लिया और भारी उत्पात मचाया। इस पर विघ्नेश्वर बहुत प्रसन्न हुए। नागों को अपने हाथो में उठाकर चूम लिया और वे उन्हें आभूषणों के रूप में शरीर पर धारण कर कैलास में चले गये।

पार्वती विघ्नेश्वर को संपेरा के रूप में देख विस्मय में आ गई। तब विघ्नेश्वर बोले–"माँ, पिता की संपत्ति का पुत्र को प्राप्त होना स्वाभाविक ही है न? शंकराभरण मेरे लिए भी आभूषण हैं! अलावा इसके इन नागों ने मेरे प्राण मित्र बनकर अपने प्राणों की भी परवाह किये बिना मेरी रक्षा की है! आत्मीय मित्रों का सहयोग ही सच्चा आभूषण होता है! इसीलिए मैं नागभूषण कहलाता हूँ।"

विघ्नेश्वर की बातें सुन शिवजी ने मंदहास किया। पर पार्वतीजी विनायक की इस विचत्र चेष्टाओं पर खीझ उठीं। इस प्रकार विनायक बराबर अपने विवाह के लिए विघ्न पैदा करते आये।

पार्वतीजी ने एक बार और विघ्नेश्वर के विवाह पर जोर दिया, तब वे बोले– "माताजी, कोई महान कार्य करने पर ही कोई भी व्यक्ति समर्थ कहलाते हैं। मैं भी छोटे भाई की तरह कोई महान कार्य करके जब तक समर्थ न कहलाऊँ, तब तक मैं कैसे विवाह कर सकता हूँ! इसलिए सोच-समझ कर तुम्हीं बताओ न?"

"बेटा, तुम्हारे अन्दर महानता की क्या कमी है? तुम अयोग्य थोड़े ही हो?" पार्वतीजी ने कहा।

[७]

दूसरे दिन 'पारा' को घर लौटते देख अहमद की जान में जान आ गई। अपने प्यारे चेले का पता न लगने पर पिछली रात को अहमद ने खाना तक न खाया था। सवेरा होते ही अपने ही ओहदे के कोत्वाल हसन को बुलवा कर उसकी सलाह मांगी। वे दोनों बातचीत कर ही रहे थे कि इतने में पारा लौट आया।

पारा ने अपना सारा अनुभव दोनों कोत्वालों को कह सुनाया। हसन ने सारी बातें सुनकर मुस्कुराते हुए कहा–"ऐसा काम कर सकने वाली युवती बगदाद भर में एक ही है। वह है दिलैला की बेटी जीनाब है! बताओ, तुम उसके साथ कैसा व्यवहार करना चाहते हो?"

"उस युवती के साथ में शादी करना चाहता हूँ।" पारा ने झट जवाब दिया।

"इतनी सारी बातों के होने के बावजूद भी तुम उस जवान लड़की के साथ शादी करना चाहते हो?" हसन ने पूछा।

"इतना ही क्या, इसके दस गुने भी वह मेरे साथ दगा करे, तब भी मैं उस युवती को माफ़ कर सकता हूँ। अगर वह मेरी बीबी बन सके तो मेरी ज़िंदगी में फिर कोई भी इच्छा न रहेगी!" पारा ने दिल खोलकर रख दिया।

"ऐसी बड़ी इच्छा को ज़रूर पूरा करना चाहिए। तुम भी बड़े ही खूबसूरत हो! तुम दोनों की जोड़ी बड़ी अच्छी बैठेगी।" हसन ने पारा का समर्थन किया।

"हसन, हमारे इस दोस्त की थोड़ी मदद करो न?" अहमद ने पूछा।

उसी वक़्त हसन ने पारा अली को अपनी एक योजना बताई।

अरब की कहानियाँ

दर असल पारा भी यही चाहता था। फिर क्या था, बड़ी खुशी के साथ वह नीग्रो के पीछे दिलैला के घर पहुँचा। इतने में दिलैला और जीनाब खाने के लिए आ गईं। रसोइया उनका खाना और पीने की चीजों का इंतजाम करके एक एक चीज़ ले जाकर दस्तरखान पर रखने लगा। जब रसोइया रसोई घर से बाहर गया, तब पारा ने लोटों में भांग मिला दिया।

थोड़ी ही देर में पारा की योजना काम कर गई। दिलैला, जीनाब, चालीस नीग्रो गुलाम, आखिर नीग्रो रसोइया और शिकारी कुत्ते भी भांग के असर से बेहोश हो जहाँ तहाँ पड़े रह गये।

पारा ने अपने सारे बदन में काला रंग पोत लिया। नीग्रो के जैसे तौलिया लपेट लिया। थोड़े दीनार और भांग लेकर सब्जी की दूकान में पहुँचा। वहाँ पर पारा ने दिलैला के रसोइये को ढूंढ निकाला और बोला–"भाई साहब, मैं इस शहर के लिए अजनबी हूँ। खुश क़िस्मती से अपनी जाति के नीग्रो तुम मुझे दिखाई दिये! क्या शराब की दूकान में चलोगे? चखकर पी लेंगे। बड़ा मजा आएगा।"

रसोइया बोला–"भाई, मुझे एक पल की भी फ़ुरसत नहीं है। तुम्हीं हमारे घर क्यों नहीं चलते? वहाँ पर तुम्हें खाने-पीने की सारी चीजों का इंतजाम करूँगा।"

पारा ने दिलैला की पोशाकें, टोपी, नीग्रो गुलामों की लाल जरीदार पोशाकें इकट्ठा कर उनकी गठरी बांध ली, छत पर जाकर सारे कबूतरों को निकाल कर बड़े पिंजड़े में बंद किया। अंत में एक चिट पर लिख दिया–"यह काम करने वाला महान वीर पारा अली को छोड़ दूसरा कोई नहीं है।" तब कबूतर और पोशाकों की गठरी को लेकर पारा सीधे अहमद के घर पहुँचा।

दिलैला जब होश में आई, तब तक शाम होने को थी। उसने पारा के द्वारा

लिखी गई चिट्ठी पढ़ ली; थोड़ी देर तक बड़ी गंभीरता पूर्वक सोचा। तब वह इस निर्णय पर पहुँची–अगर यह खबर प्रकट हो गई तो उसकी इज्जत के साथ नौकरी छूट जाएगी। ऐसी हालत में पारा के साथ बदला लेने पर भी कोई प्रयोजन सिद्ध न होगा। अहमद ने ही उसके द्वारा यह काम करवाया होगा! उसके पैरों पर गिरकर चोरी गये माल को वापस लाने के सिवा कोई दूसरा मार्ग नहीं है, अहमद के साथ बदला लेने के लिए उसने अपनी बेटी जीनाब के द्वारा पारा अली का अपमान कराया, बदले में अहमद ने उसी पारा के द्वारा प्रतीकार किया। इसलिए अहमद के साथ समझौता किया जा सकता है।" यों विचार करके दिलैला सीधे अहमद के घर पहुँची। अहमद, हसन, पारा अली दस्तरखान पर बैठे खाना खा रहे थे। दिलैला को देखते ही अहमद और हसन ने उठकर सर झुकाकर सलाम किया। उसका स्वागत करते बोले–"पधारिये दिलैलाजी, हमारी क़तार में बैठकर खाना खाइये।"

दिलैला को जब पता चला कि वे लोग कबूतरों का मांस खा रहे हैं। तब उसकी आँखों के सामने अंधेरा छा गया। वह कांपनेवाले स्वर में बोली–"अहमद तुम्हारा मुझ पर चाहे जैसा भी गुस्सा क्यों हो, खलीफ़ा साहब डाक के जिन कबूतरों को अपनी जान के बराबर प्यारा मानते हैं, उनको चुरवा कर पका करके खाते हो?"

"ओह, अगर हमें पहले ही मालूम हो जाता कि ये सब डाक के कबूतर हैं, तब हम इनको पकवा कर कभी नहीं खाते ।" पारा बोला। इस पर सब लोग हंस पड़े ।

इसके बाद हसन ने दिलैला को सांत्वना देते हुए कहा–"माई, तुम घबराओ मत! डाक वाले कबूतर हिफ़ाजत से हैं। खलीफ़ा का सारा माल सुरक्षित है । यह युवक अली अपनी छोटी सी इच्छा रखता है। उसकी अगर तुम पूरी कर सकोगे तो इसी पल में तुम्हारे कबूतर व पोशाकें तुम्हारे हाथ सौंप देंगे ।"

"उसकी इच्छा बताइये । मगर आप लोग अच्छी तरह से जानते हैं कि मैं एक बेसहारा औरत हूं ।" दिलैला ने कहा।

"बात वैसी कोई खास नहीं है। यह अली तुम्हारी बेटी जीनाब के साथ शादी करना चाहता है!" हसन ने कहा ।

"उफ़! इस छोटी-सी बात को लेकर आप लोगों ने मुझे तंग किया? मैं और मेरी लड़की जीनाब–हम दोनों मान भी ले तो क्या फ़ायदा? क्योंकि उसके बालिग होने तक उसका मामा जुरेक उसका अभिभावक है। वे मेरे बड़े भाई हैं। उनके मान लेने पर ही यह शादी हो सकती है। आप लोगों से यह बात छिपी नहीं है। जुरेक तो अव्वल दर्जे के क्रूर हैं। उनको मनाने की जिम्मेदारी पारा अली की है।" दिलैला ने कहा ।

पारा अली ज़ुरेक से मिलकर उसकी अनुमति लेने के बाद ही जीनाब के साथ शादी करने को तैयार हो गया। दिलैला अपनी पोशाक और कबूतर लेकर चली गई।

दिलैला का बड़ा भाई जुरेक भी एक जमाने में नामी डाकू था। उन दिनों में उसने जो चोरियां कीं, उनका पता लगानेवाले, उनकी खोज और दरियाफ़्त करनेवाले भी कोई न थे। वह अपनी जगह बैठकर हिले-डुले बिना जब जहाँ चाहे, वहाँ चोरी कर सकता था। अब वह बूढ़ा हो चुका था। चोरियाँ करना

बंद करके मछलियाँ भूनकर बेच करके अपनी जिंदगी गुजार रहा था। मगर इस वक़्त भी उसके अन्दर कुछ शक्तियाँ थीं।

जुरेक ने अपनी दूकान की ओर लोगों को आकृष्ट करने के लिए एक नई चाल चली थी। उसने अपनी दूकान के दर्वाजे पर एक हज़ार दीनारों की थैली लटकवा दी और इस बात का ढिंढ़ोरा पिटवाया था कि उस थैली को जो लोग हड़पकर ले जा सकते हैं, वह थैली उन्हीं लोगों की हो जाएगी। किसी भी तरह से उसे पाने के ख्याल से हज़ारों की तादाद में लोगों ने आकर जुरेक की दूकान से माल खरीदा। मगर एक भी उस थैली को हड़प न पाया। क्योंकि कोई भी व्यक्ति अगर उस थैली को छू दे तो दूकान की घंटियाँ और डफलियाँ अपने आप बज उठती हैं। उनकी आवाज को सुनते ही चाहे जुरेक पिछवाड़े भी क्यों रहते हो, दौड़ आकर चोर को पकड़ लेता है। नहीं तो रांगा के गोले चोरों पर बरसा देता है। उनकी मारों से अपने हाथ-पैर तुड़ानेवाले लोग भी कम नहीं हैं।

पारा अली ने जुरेक से मिलकर अपना परिचय दिया और बताया कि वह फिलहाल कोत्वाल अहमद के घर पर रहता है और वह जीनाब के साथ शादी करना चाहता है, इसलिए अनुमति दे। मगर बूढ़े जुरेक ने पारा के साथ जीनाब की शादी करने से साफ़ इनकार किया। उसका ख्याल था कि अली तो जीनाब के योग्य वर नहीं है।

इस पर पारा अली को लगा कि जुरेक की दीनारोंवाली थैली हड़पकर जीनाब के साथ शादी करने के लिए उसकी इजाज़त प्राप्त कर ले। इस वास्ते अली ने एक गर्भवती औरत का भेष बनाया और वह जुरेक की दूकान पर पहुँचा। मछलियों का सौदा करते हुए उसने ऐसा अभिनय किया, मानो प्रसव की पीड़ा शुरू हो गई है। इस पर जुरेक घबड़ा उठा और अपनी औरत को बुला लाने के लिए भीतर चला गया। (और है)
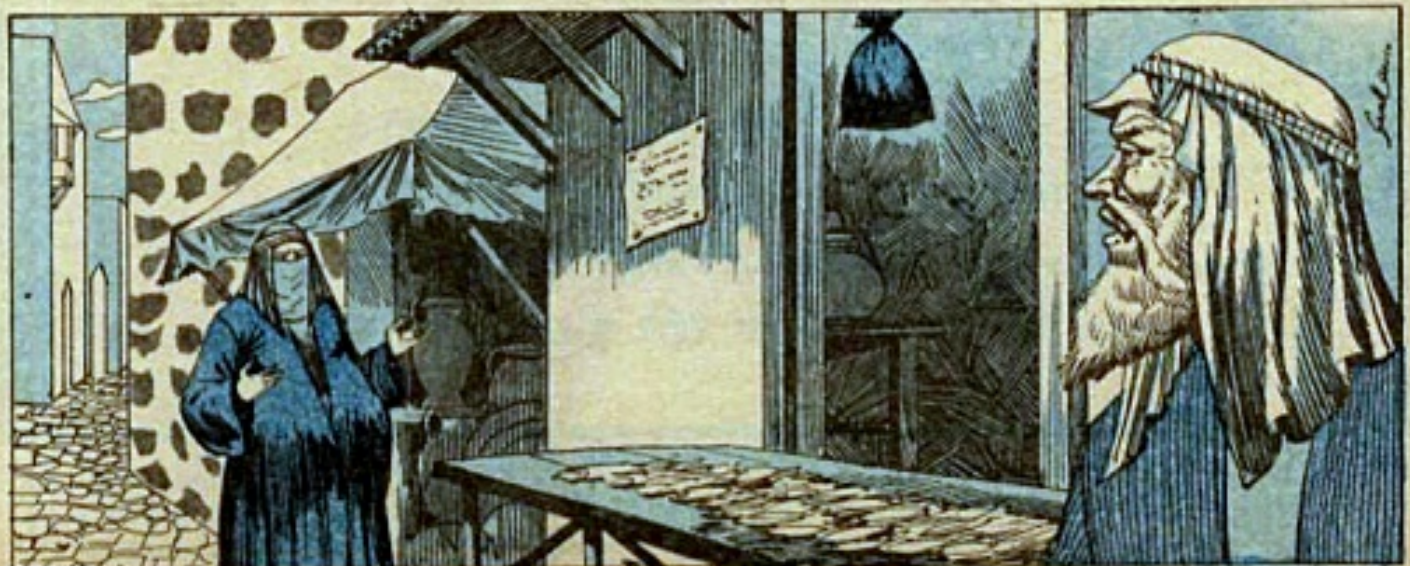
फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता :: पुरस्कार २५)

पुरस्कृत परिचयोक्तियां अक्तूबर १९८१ के अंक में प्रकाशित की जायेंगी।

S. B. Takalkar

Devidas Kasbekar

★ उपर्युक्त फोटो की सही परिचयोक्तियां दो-तीन शब्दों की हों और परस्पर संबंधित हों।

★ अगस्त १० तक परिचयोक्तियां प्राप्त होनी चाहिए, उसके बाद प्राप्त होनेवाली परिचयोक्तियों पर विचार नहीं किया जाएगा।

★ अत्युत्तम परिचयोक्ति को (दोनों परिचयोक्तियों को मिलाकर) २५ रु. का पुरस्कार दिया जाएगा।

★ दोनों परिचयोक्तियां कार्ड पर लिखकर (परिचयोक्तियों से भिन्न बातें उसमें न लिखें) निम्नलिखित पते पर भेजें: चन्दामामा फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता, मद्रास-२६

जून के फोटो-परिणाम

प्रथम फोटो : मैं वादक बनी वीणा की !

द्वितीय फोटो : देख सामने मुद्रा मीरा की !!

प्रेषक : श्री रामकुमार रस्तोगी, मेरन बाजार बिलारी, मुरादाबाद (उ. प्र.)

पुरस्कार की राशि रु. २५ इस महीने के अंत तक भेजी जाएगी।

Printed by B. V. REDDI at Prasad Process Private Ltd., and Published by B. VISWANATHA REDDI for CHANDAMAMA CHILDREN'S TRUST FUND (Prop. of Chandamama Publications) 188. Arcot Road, Madras-600 026 (India). Controlling Editor: NAGI REDDI.
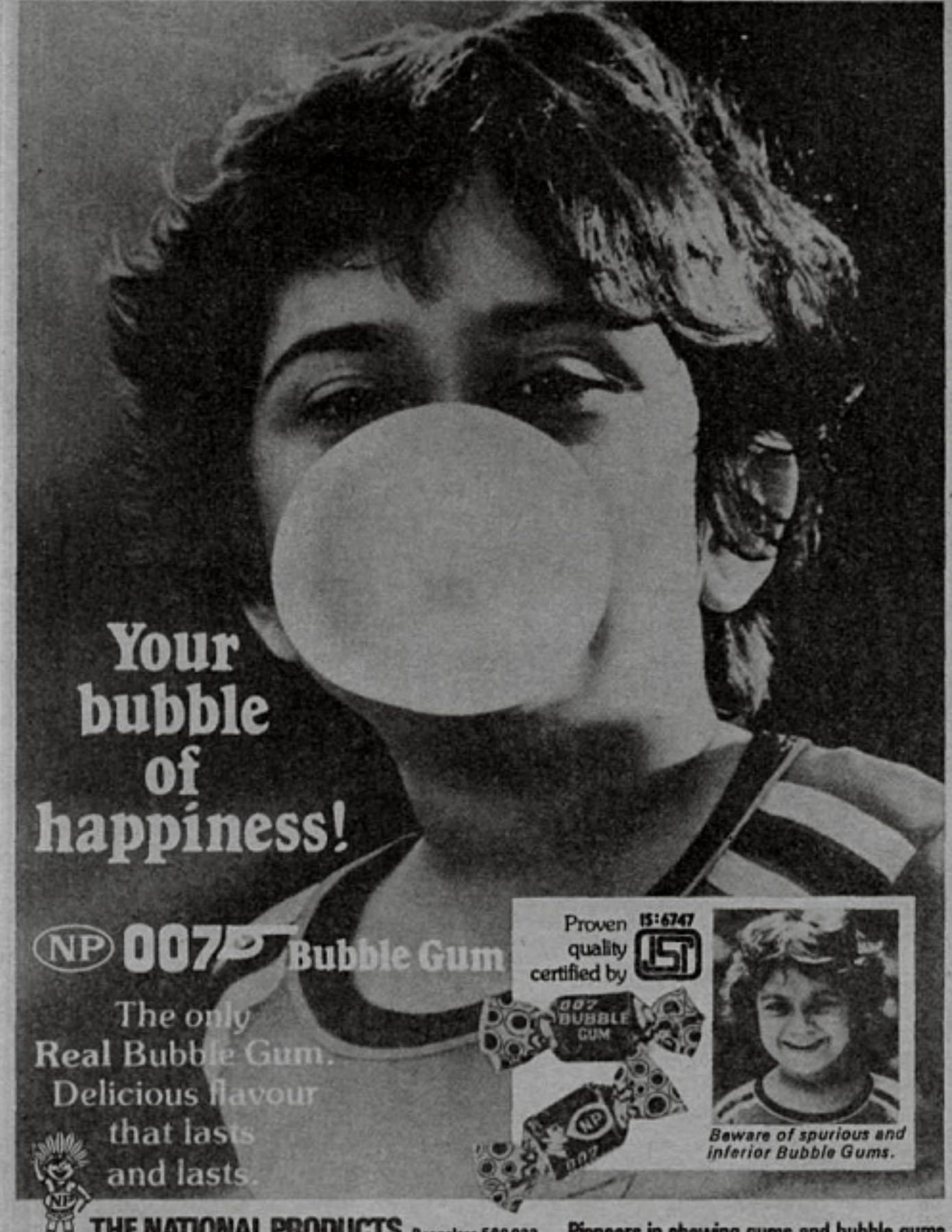
आ रहे हैं, आप के मन बहलाने
वाल्ट डिस्नी की
अनोखी दुनिया से आप के मित्र
मिकी माउस, डोनाल्ड डक,
अंकल स्क्रूज, गूफ़ी आदि

चन्दामामा
क्लासिक्स और कामिक्स
हिन्दी में